ज्ञानपीठ लोकोदय ग्रन्थमाला हिन्दी ग्रन्थाङ्क—६८

कालके पंख

[ऐतिहासिक कहानियाँ]

आनन्दप्रकाश जैन



भारतीय ज्ञानपीठ • काशी

ज्ञानपीठ-लोकोदय-ग्रन्थमाला-सम्पादक और नियामक
श्री लक्ष्मीचन्द्र जैन एम० ए०

प्रकाशक
अयोध्याप्रसाद गोयलीय
मन्त्री, भारतीय ज्ञानपीठ
दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी

प्रथम संस्करण
१९५७ ई०

मूल्य तीन रुपये

मुद्रक
बाबूलाल जैन फागुल्ल
सन्मति मुद्रणालय
दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी

ये नई ऐतिहासिक कहानियाँ

मेरी ऐतिहासिक कहानियोंका यह तीसरा संग्रह पाठकोंके हाथोंमें जा रहा है। मेरे न चाहते हुए भी लोग-बाग ऐतिहासिक कथा-लेखकके रूपमें ही मेरा नाम विशेष रूपसे लेते हैं! न चाहनेका कारण यह है कि एक विशेष धाराके साथ आपका नाम ज़बरदस्ती जोड़ दिया जाये, तो इसका मतलब यह होगा कि आपकी शेष धाराओंकी ओर ध्यान दिया जाना बन्द कर दिया जायेगा! यह घाटेका सौदा है।

लेकिन इन ऐतिहासिक कथा-संग्रहोंका लेखक होनेके नाते तो मुझे कुछ बातें साफ़ करनी ही पड़ेंगी। विशेषरूपसे जो ग़लतफ़हमियाँ ऐतिहासिक कहानीकी रूप-रेखाके बारेमें सामान्य पाठकके मस्तिष्कमें हैं, वे ज़रूर साफ होनी चाहिए।

यह तो प्रकट ही है कि कथा-शैलीकी वर्त्तमान रूप-रेखा हमें पश्चिमके अनुकरणसे मिली है। पश्चिमकी सामाजिक कहानियोंका आभ्यन्तर हमारी सामाजिक कहानियोंके आभ्यन्तरसे भिन्न होता है क्योंकि वहाँका सामाजिक विकास, रीति-रिवाज और संस्कृति यहाँसे भिन्न हैं। किन्तु ऐतिहासिक कहानियोंकी कथा-शैलीके बारेमें बिलकुल यही बात नहीं कही जा सकती। जब हम इतिहासकी सामान्य गतिविधिकी खोज करते हैं, तो हमें पता लगता है कि भिन्न-भिन्न देशोंमें तत्कालीन सामाजिक संस्कृति भिन्न-भिन्न होते हुए भी सामाजिक विकास लगभग एक-से सिद्धान्तोंपर आश्रित रहा है। कहीं कोई सिद्धान्त जल्दी अमलमें आ गया है कहीं देरमें। किसी-किसी देशने विकासकी कोई मञ्ज़िल लाँघ भी ली है—यह एक अलग बात है, अलग विषय है। लेकिन किसी देशका ऐतिहासिक विकास निरखने-परखनेमें हमें आमतौरसे उन नियमों और सिद्धान्तोंका ध्यान भी रखना

ही पड़ता है, जिनका सम्बन्ध सारे विश्वके ऐतिहासिक विकाससे है। इसके सिवा कोई चारा भी नहीं है क्योंकि बहुत अधिक विवरणमें जानेका सुभीता तो हमारे पास, वर्त्तमानकी तरह, होता ही नहीं। तब पश्चिमी ऐतिहासिक कहानीकी शैली और तत्सम्बन्धी भारतीय शैलीमें हमें यदि वह समानता अधिक मिले, तो आश्चर्य नहीं। वह समानता निम्नलिखित रूपोंमें मिलती है :

पश्चिमने ऐतिहासिक कहानी और उपन्यासमें रोमांस और रोमांटिसिज्मको प्रायः ही प्राथमिकता दी है। फलतः भारतमें भी ऐतिहासिक कथा-लेखकोंने इन्हीं दो चीज़ोंका विशेष रूपसे ध्यान रखा है। सामन्तकालीन वीरगाथाओंसे प्रभावित होकर भारतके अनेक कथा-लेखकोंने ऐतिहासिक कहानीकी रचना की है। स्वयं मैंने भी कुछ ऐसी ऐतिहासिक कहानियाँ लिखी हैं। कुछ लेखकोंने स्वामि-भक्ति जैसे विषयको लेकर भी कथा-रचना की है। उचित-अनुचित रोमांस तो ऐतिहासिक कथाओंमें बहुत प्रचलित रहा है। इस प्रकारकी कहानियोंमें यों ऊपरसे देखनेमें कोई दोष कथावस्तुकी दृष्टिसे दिखाई नहीं देता—पर हमारी वर्त्तमान समाज-रचनाके विकासको जिन वास्तविक और यथार्थ दिशासंकेतोंकी आवश्यकता है उन्हें न केवल ये कहानियाँ पकड नहीं पातीं, बल्कि उनकी उपेक्षा करके प्राचीन जर्जर रीति-नीतिके पोषणका दोष भी इनपर आता है। भावी राज्य और समाजकी जो रूपरेखा अब धीरे-धीरे नवभारतकी जनताके मस्तिष्कमें उभर रही है उसकी ओर इंगित करने अथवा उसके अनगिनत सामाजिक आधारतत्त्वोंमें से किसीको उभारनेका दायित्व ऐतिहासिक कथाके ऊपर इसलिए आता है कि वह ऐतिहासिक कथा है। अब तक तो चाहे जो कुछ रहा हो, पर अब नई ऐतिहासिक कथाकी यही विशेषता होनी चाहिए। उदाहरणके लिए हमने एक भारत देश कहलानेके लिए जिस प्रकार प्राचीन राज्योंकी सीमाओंको तोड़ा, उसी प्रकार नई समाजवादी रचनाके लिए और परमाणु युद्धके भयंकर परिणामोंसे बचनेके लिए हमें मानवीय

सम्बन्धोंके बीचसे देश और राष्ट्रकी सीमाको भी हटानेका प्रयत्न करना चाहिए। तभी शान्तिके साथ हम नई समाजवादी रचनाकी ओर प्रगति कर सकेंगे। किन्तु ऐसा करते हुए जहाँ हम विदेशियोंके प्रति अपने हृदय खोलेंगे, वहाँ अपने राष्ट्रकी स्वतन्त्र इकाईको भी नहीं भूल सकेंगे और मातृभूमिकी स्वतन्त्रतापर प्राण-विसर्जन करनेकी आवश्यकता पड़े, तो करना ही होगा। इन दोनों तथ्योंको प्रतीक रूपमें मैंने इस संग्रहमें सग्रहीत कहानी "कौवेका घोंसला" में देनेका नन्हा-मोटा प्रयत्न किया है। इन तथ्योंके आपसमें टकरानेसे जो संघर्ष और विडम्बनाएँ उत्पन्न हो सकती हैं उनका एक आभास इस कथाके रोमांसमें मिल सकेगा।

इसी प्रकार मेरी एक प्रारम्भिक रचना 'गिरजेका कंगूरा' है। उस समय ऐतिहासिक कहानीकी धारा मेरे नामके साथ जुडी नहीं थी। अपने परिवारकी एक दन्तकथाके आधारपर मैंने यह कहानी लिखी थी। अपने धर्मके प्रति अत्यधिक कट्टर होना हमारी नई समाज-रचनाकी कल्पनाके अनुकूल नहीं है। किन्तु हमारी प्रताड़ित भावनाएँ, जो नितान्त व्यक्तिगत होती है, किस प्रकार दूसरेके धर्मके ऊपर उबल पड़ती है, किस प्रकार उसकी धर्मध्वजा उखाड़कर अपने गिरजेका कगूरा ऊँचा करनेको प्रेरित करती है, इसका छोटा-सा चित्रण इस कहानीमें करनेका प्रयत्न किया गया था।

इसी प्रकार 'सैल्यूकसकी बेटी' पवित्र वैवाहिक सम्बन्धको राजनीतिक कूटनीतिसे अलग करती है। यही नहीं, विदेशियोंके स्वभाव, रीतिनीति और संस्कृतिके प्रति जो घोर घृणा हम जब-तब प्रदर्शित करते हैं और अपनी ही संस्कृति, सभ्यता और रिवाजोंको श्रेष्ठ माननेका जो हीनमन्यता-मूलक आग्रह हमारे भीतर है उसे 'सैल्यूकसकी बेटी' थोड़ी-सी राहत देती है।

सभी कहानियोंका तत्त्व-विवेचन करना यहाँ अभीष्ट नहीं है। मेरी सभी ऐतिहासिक कहानियाँ आधुनिक कथा-रचनाकी इस आवश्यकताकी

कसौटीपर खरी उतरती है यह भी कहनेका दंभ मेरे भीतर नहीं है। किन्तु ऐतिहासिक कथाकी रूप-रेखाके बनाते समय यदि इन मूलभूत तथ्योंको नजरअन्दाज किया जाये, तो इस युगका प्रतिनिधित्व करनेवाली ऐतिहासिक कहानी वह नहीं कहलायेगी !

ऐतिहासिक कहानीके क्या क्या दायित्व है इस विषयमें अभी भारतीय कथा-लेखकोंमेंसे अधिकतर कुछ निश्चित नहीं कर पाये। यही कारण है कि ऐतिहासिक कथा-रचनाका क्षेत्र यहाँ अभी बहुत सीमित है...पर इसकी माँग बहुत अधिक है। सामान्य पाठक ऐतिहासिक कहानी चावसे पढ़ता है और सम्पादक लोग भी चावसे छापते है। अतः इस ओर नये प्रयत्न किये जानेकी बड़ी आवश्यकता है। तभी ऐतिहासिक कहानीकी रूपरेखा और उपादेयता विकसित हो सकती है। अतः सामान्य रूपसे ऐतिहासिक कहानीके क्या क्या मूल गुण होने चाहिए इसकी एक झलक अपने अनु-भवसे यहाँ दे देना भी कुछ असंगत न होगा :

ऐतिहासिक कहानीका काम केवल ऐतिहासिक तथ्योंका निवेदन करना नहीं है, न लखनऊके भोंड़ोंकी तरह जर्कबर्क कपड़े पहनकर सम्पूर्ण नवीनताका मखौल उसे उड़ाना है, न ही इतिहासकी पृष्ठभूमिके अनगिनत छलछिद्रोंको मूँदना है। ऐतिहासिक क्रीड़ास्थलोंके खिलाड़ियोंमेंसे किसीके प्रति अनुचित सहानुभूति उत्पन्न करना या किसीके प्रति घोर घृणा उत्पन्न करना भी ऐतिहासिक कहानीका काम नहीं है। रस-भंग करके इतिहास पढ़ाना उसका कर्त्तव्य नहीं है। ऐतिहासिक कहानी आखिर तो बेचारी कहानी ही है। उससे अनुपयुक्त आशाएँ नहीं करनी चाहिए।

और यदि हम नारीको कहानीका प्रतीक मानकर चलें, तो एक सीधी-सादी देहातिनके कपड़े पहने भी हम नारीको देखते हैं। शहरकी छैल-छबीली और कटगोंकी नीलपरी भी नारी है। पूर्णतः पाश्चात्य वेशभूषाके रंगमें रँगी, भारतके वातावरणसे ऊबी हुई, ऊपरसे मस्त, भीतरसे त्रस्त, फैशनकी पुतली भी नारी है। कहानी इस रंगारंग नारीका ही शब्द-प्रति-

रूप है। नारीकी समस्त विशेषताओंका समावेश उसमें मिलता है। कहानी एक ऐसी पहेली है, जो मनुष्य-समाजकी समस्याओंको अपनी विशिष्ट नारीसुलभ प्रवृत्तियोंसे सुलझाती है। ऐतिहासिक कहानी विश्वके ऐतिहासिक विकासकी नारी है। नारीको छूना तो वर्जित नहीं है—पर ग़लत पुरज़ेपर हाथ न पड़ जाये यही अपेक्षित है। वह प्रेमिका और पत्नी बनकर आपको रोमांसके झूलेमें झुलाती है, माँ बनकर आपको सही दिशा-संकेत देती है, बहन बनकर आपको हँसाती-रुलाती है, वेश्या बनकर कभी-कभी आपकी सेक्समूलक प्रवृत्तियोंको अनावश्यक रूपसे उभारती है और आपका मनोरंजन करती है, किन्तु अपने समयका तर्कसंगत प्रतिनिधित्व यदि ऐतिहासिक विकासकी यह नारी नहीं करती, तो उसमें बनावटका दोष आ जायेगा और आश्चर्यकी बात तो यह है कि ऐतिहासिक तथ्यों, वातावरण, रीति-रिवाजों, तौर-तरीकोंको जैसे-के-तैसे दिखानेकी अत्यधिक सतर्कता भी बनावट पैदा कर देती है। अतः ऐतिहासिक कहानीको पढ़ने या रचने दोनोंमें ही प्राचीन समाजका यथारूप चित्रण खोजना एक बहुत बड़ी गलती है। 'ऐसा ही हुआ होगा' यह समझमें आ जाये ऐसा चित्रण तो हो सकता है। किन्तु जैसा हुआ होगा वैसा ही चित्रण करना किसीके लिए भी असम्भव है।

ऐतिहासिक कहानीके विषयमें यही थोड़ा-सा निवेदन मुझे करना था। इस संग्रहकी कुछ कहानियाँ 'सरिता' से ली गई हैं। उसके संचालकोंके प्रति मैं अपना आभार प्रकट करता हूँ।

८५ मादवाड़ा, मेरठ
२७ मई १९५७ ई०

आनन्दप्रकाश जैन

विषय-क्रम

• सैल्यूकसकी बेटी

सन् ३०६ ई० पू० के लगभग सिकन्दरके दुर्दान्त सेनापति सैल्यूकसने फिर एक बार सिकन्दरके अपूर्ण स्वप्नको चरितार्थ करनेकी चेष्टा की। किन्तु भारत-सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्यके धनुर्धरोंने उसे सिन्धुसे आगे बढ़नेका अवसर नहीं दिया। इसके बाद भारतीय सेनाओंने यूनानी सेनापतिका पीछा करना आरम्भ किया और पूर्वी ईरान तक पहुँच कर फिर एक बार शक्ति-संतुलनके लिए तत्पर हो गईं।

सैल्यूकसने सन्धिका प्रस्ताव रखा। भारतवर्ष और अफगानिस्तानपर चन्द्रगुप्त मौर्यका एकच्छत्र राज्याधिकार मान लिया गया। मित्रता स्थापित हो गई और इसके चिह्नस्वरूप चन्द्रगुप्तने यूनानियोंको वह भेंट दी, जो उनके लिए कम महत्त्वपूर्ण नहीं थी। भारतका हाथी यूनानियोंके लिए सदासे आश्चर्यकी चीज थी। चन्द्रगुप्तने पांच सौ हाथी सैल्यूकसको भेंट किये और सैल्यूकसने इस मित्रताके सम्बन्धको चिरस्थायी रखनेके लिए अपनी बेटी हेलेनका विवाह चन्द्रगुप्तके साथ कर दिया।

पाटलिपुत्रके जनोंने अपने विजयी सम्राट् और उसकी नवीन रानीका अभिनन्दन करनेके लिए नगरके तोरणद्वारोंको सजाया, सड़कोंपर गंगाजल छिड़का, और चन्द्रगुप्तके पुनरागमनकी रातको दीपावली मनाई। पाटलिपुत्रके मुख्य द्वारमें प्रवेश करते ही सुन्दरी हेलेनका स्वागत लाखों पुरवासियोंने किया।

आचार्य विष्णुगुप्त चाणक्य प्रदर्शनकी वस्तु बनना पसन्द नहीं करते थे। अत: मुख्य द्वारपर आते ही उन्होंने सुविज्ञ मन्त्री राक्षसका हाथ थामा और एक शीघ्रगामी अश्वरथमें खड़े होकर वह जनताका तुमुल अभिनन्दन स्वीकार करते हुए तेजीके साथ विस्तीर्ण राजपथके बीचसे

निकल गये, पीछे ज़ोर-ज़ोरसे हर्षध्वनि करते हुए ढोल और नगाड़े आये। उनके पीछे एक विशाल हाथीपर स्वयं चन्द्रगुप्त था, जो लोगोंकी प्रसन्नता, रव और उछलकूदकी ओर ध्यान दिये बिना उसी प्रकार धीर-गम्भीर, राजप्रासादकी ओर बढ़ रहा था, जिस प्रकार भारतके एक एक भागको अधीन करके वह अनेक बार लौटा था। उसकी मुद्रासे लगता था कि वह विजेता है, विजय प्राप्त करना उसके लिए दैनिक कार्य है, और उसके लिए इतना शोर मचाना व्यर्थ है।

उसके पीछे भालेबन्द भारतीय सैनिकोंकी अट्ठदली पंक्ति थी। फिर ऊँटोंका लम्बा काफ़िला था। फिर यूनानी अंगरक्षकोंका एक सुदृढ़ दस्ता था, जिसके बीचमें घिरा हुआ यूनानी सुन्दरी हेलेनका हाथी अपनी विशिष्ट चालसे हेलेनको रिझाता हुआ खरामा-खरामा बढ़ रहा था। हाथीपर पीछे उसकी अभिन्न सखी गैलेशिया उसके ऊपर लगे छत्रका स्वर्णदण्ड पकड़े खड़ी थी। हाथीके पीछे यूनानी अंगरक्षिकाएँ कसे हुए सैनिक वस्त्रोंमें सुसज्जित बराबर-बराबर चार पंक्तियोंमें आ रही थीं।

हेलेनकी अवस्था विचित्र थी। गंभीरता उसको छू भी नहीं गई थी। केलेके सुकोमल गोभकी भाँति उसकी बाँह बार-बार किसी उछलते हुए भारतीयकी ओर उठकर उसके अभिनन्दनको हर्षातिरेकसे स्वीकार करती थी। थोड़ी-थोड़ी देरमें वह गैलेशियाकी ओर अपनी सुराहीदार गरदन मोड़कर मोती चमका देती थी। चपल चञ्चलाकी भाँति वीथिकाओंसे झाँकती हुई कुललनाओंके बिखरते हुए हास्यमें वह अपना हास्य मिला देती थी। उसकी आँखें पाटलिपुत्रकी उस अपूर्व दीपमालिकासे प्रभासित होकर दो अल्हड़ ज्योतियोंकी भाँति नाच रही थीं। उसके आसनके चारों ओरकी हौदी गृहलक्ष्मियोंके द्वारा फेंके हुए पुष्पोंसे भर गई थी। अधिक उत्साही दर्शकोंको हाथीके निकट आते देखकर वह उन पुष्पोंकी मुट्ठियाँ भर-भरकर उनपर उछाल देती थी।

हेलेन भीतरसे जो कुछ थी वही बाहरसे दिखाई पड़ रही थी। अठारह

वर्षकी एक अधीर, अगम्भीर, चञ्चल बालिका जिसने जन्मसे ही भारतकी चर्चा सुनी थी, और आज उसके दर्शन किये थे।

पाटलिपुत्रके काष्ठप्रासादमें भी हेलेनका स्वागत कम उत्साहके साथ नहीं हुआ। हेलेन जब नीचे उतरी, तो पट्टरानीने उसे हाथोंहाथ लिया। हेलेनने ग्रीक भाषामें कुछ कहा, जिसे सिवा उसकी अभिन्न सहेलीके और किसीने न समझा। इसपर हेलेन बेचैनी और चपलतासे इधर-उधर देखने लगी। यूनानी अंगरक्षिकाओंमेंसे एक आगे निकलकर आगे आई और हेलेनने फिर अपने शब्द दोहराये। अंगरक्षिकाने मागधीमें अनुवाद करके हेलेनका मन्तव्य पट्टरानीको समझाया :

"यूनानकी कली कहती है कि क्या आप उसकी सहेली बनेंगी ?"

पट्टरानी गम्भीर और शिष्ट थी। उसने शालीनतासे उत्तर दिया, "क्यों नहीं ? यहाँ हम सब बहनें हैं।"

"यूनानकी कली कहती है कि आप तैरना तो जानती हैं न ?"

पट्टरानीके पीछे खड़ी अनेक रानियोंने मुँहमें पल्ले देकर हास्यको बिखरनेसे रोका। पट्टरानीका मुँह लज्जासे लाल हो गया। उन्होंने इस प्रकारके प्रश्नकी प्रत्याशा न की थी। मगधकी राजरानीका तैरनेसे क्या वास्ता ? यह चुहल तो छोटी-छोटी लड़कियोंको शोभा देती है। उन्होंने शिष्टताके साथ कहा, "राजभवनके भीतर ताल है। वह कमलोंसे ढँका है। छोटी बहन चाहेंगी, तो कमलोंको हटाकर उसमें स्वच्छ जल भरवा दिया जायगा। परंतु अभी तो राजमहलमें चलकर इसे यात्राकी थकान उतारनी है और फिर कई दिन तो उत्सव, गान और मंगल-समारोह चलेंगे...।"

राजभवनकी चारों ओर फैले हुए उद्यानकी सुगन्धित वायुको जी भरकर सूँघते हुए हेलेनने प्रसन्नतासे कहा, "डीडो, मेरी इन सब बहनोंसे कहो कि मुझे मित्र बनाना बहुत पसन्द है। मित्र तीनकी संख्यामें अच्छे होते हैं। इनमेंसे जो सबसे पहले मेरे कानमें कहेंगी कि वे मेरा मित्र होंगी

उनमेंसे प्रथम तीनको मैं एक मीठा, मदभरी सूनाग्री कहानी सुनाऊँगी— जिसे सुनकर वे खानापीना तक भूल जायेंगी !" और यह कहकर वह खिलखिलाकर पट्टरानीके माथेको चूमती हुई आगे बढ़ गई।

कुछ विस्मित-सी, हेलेनके द्वारा कहे हुए वचनोंका उल्था सुनती हुई पट्टरानी पीछे रह गई। अनेक रानियाँ उस स्वच्छन्द वनकी चिड़ियाके साथ-साथ लग गईं और अपलक नेत्रोंसे उसके उस द्विगुणित सौंदर्यको निहारने लगीं, जो उसके हासमें और भी अधिक तीव्र और चंचलतासे और भी अधिक मुखर हो रहा था। उनमें जो छोटी आयुकी थीं उन्हें लगा मानों राजमहलके रीति-रिवाजके बोझसे दबे उनके अंतरसे ही कोई अँगड़ाई लेकर उठा है और हेलेनके रूपमें प्रकट हुआ है। जो बड़ी आयुकी थीं, वे उसके प्रत्येक हावभावको उत्सुकता, आश्चर्य और उद्वेगके साथ निरख रही थीं। राजमहलके मुखद्वार पर जब अनेक रानियोंने दासियोंके हाथोंसे आरतीके थाल लेकर हेलेनकी आरती उतारनी आरम्भ की, तो वह आश्चर्य और बच्चों-जैसी सरलताके साथ होंठोंको गोल किये, नेत्रोंको विस्फारित किये उन्हें देखती रही। उसने गैलेशियासे पूछा : "क्या है यह ?"

गैलेशियाने डीडोकी ओर देखा। उसने आगे बढ़कर बताया : "ये रानियाँ इन दीपोंसे आपके भविष्यका पथ उज्ज्वल कर रही हैं, रानी हेलेन।"

"ओह !" हेलेनने असीम आश्चर्यका भाव प्रकट करते हुए हास्यपूर्ण स्वरमें कहा, "मैं समझी थी कि ये सब मिलकर मुझे डरा रही हैं !"

डीडोसे पट्टरानीने हेलेनकी बात सुनी और उन्हें पहली बार हेलेनकी बात बुरी लगी। हास्यकी भी एक सीमा होती है। नई आई विवाहिताको तो थोड़ी-बहुत लज्जा चाहिए, और यदि विदेशी रमणियोंमें यह न भी होती हो, तो पवित्र प्रथाओंका सम्मान तो करना ही चाहिए। मगर हेलेन अब तक दूसरे काममें उलझ चुकी थी।

द्वारके भीतर जानेके स्थान पर हेलेन द्वारसे कुछ दूरीपर खड़े काठके एक सफेद हाथीके पास फुदककर पहुँची। परिचारिकाओंने तुरन्त प्रकाश वहाँ तक पहुँचाया, जब कि रानियाँ सबकी सब द्वारपर खड़ी इस विचित्र उच्छृंखल नवेलीको निरखती रह गईं।

हाथीपर चारों ओरसे हाथ फेरकर हेलेनने गैलेशियासे कहा, "यह तो काठका मालूम होता है!"

"शायद," गैलेशियाने कहा।

फिर रानियोंने देखा कि हेलेनके संकेतपर गैलेशिया हाथीके नीचेको होकर दूसरी ओर निकल गई, और फिर उसी मार्गसे वापस आई। उसने हेलेनसे कहा, "नहीं, ऐसी कोई बात नहीं है।'

दोनों उछलती हुई फिर वापस रानियोंके बीचमें आईं। हेलेनने डीडोसे कुछ कहा। डीडोने पट्टरानीसे विनम्र शब्दोंमें निवेदन किया, "क्षमा कीजिये, रानीजी, रानी हेलेन कहती हैं कि वह बहुत अधिक उत्सुक हो गई थी। अब आप उन्हें जहाँ चाहें ले जा सकती हैं।"

रानी हेलेनकी चर्चाको लेकर शीघ्र ही सारा राजप्रासाद हँसीके गोल-गप्पोंसे महकने लगा। हेलेनकी ओरसे प्रति पल एक नीतिविरुद्ध हलचल की आशंका रहती थी। उसका प्रत्येक पग अनिश्चित था। स्नानके समय उसने भारतीय परिचारिकाओंसे कुछ देर बड़े शौकसे उबटन मलवाना आरम्भ किया। किन्तु जब वे उसके चेहरे पर भी उसे मलने लगीं, तो वह घबराकर खड़ी हो गई। बहुत समझाने पर भी वह स्नान-प्रसाधनकी शेष क्रियाओंका प्रयोग अपने शरीर पर करानेके लिए तैयार नहीं हुई। इसके साथ ही उसने वस्त्र लेकर तुरन्त सारा उबटन बदनसे पोंछनेकी चेष्टा की। बच्चों की तरह चिल्लाकर उसने भारतीय परिचारिकाओंको कक्षसे बाहर निकाल दिया और बड़ी रानीसे कहा कि वह तालपर नहायेगी। ताल रात्रिमें ही तैयार नहीं हो सकता था। फलतः पानीकी हौदीको उसने स्वच्छ

जलसे भरवाया और चार घड़ी तक उसके भीतर लेटी रही। तब तक सैलेशिया यूनानी मसालों और उबटनसे उसके बदनको रगड़ती रही।

सैल्यूकस-विजयकी राजनीतिक सम्भावनाओंपर विचार करनेके लिए बहुत रात तक मौर्यकुलश्रेष्ठ राक्षस और चाणक्यसे विचार-विमर्श करते रहे और अन्तमें शेष बातें कलपर उठा रखनेके लिए छोड़कर उठ गये। चलते समय चाणक्यने राक्षसको बाहर निकल जानेका अवसर देते हुए चन्द्रगुप्तसे कहा, "वत्स, यूनानी सुन्दरीका विवाह मैंने तुम्हारे साथ हो जाने दिया है। किन्तु ध्यान रखना, वह शत्रुकी पुत्री है। वह बहुत वाचाल और उच्छृंखल प्रतीत होती है और उच्छृंखल व्यक्तिके द्वारा होनेवाले कर्मका कोई अनुमान नहीं होता। विश्वास और असावधानी किसी नरेशका सिर काटनेके लिए दैवी दुधारा होता है।"

चन्द्रगुप्तने कौटिल्यको प्रणाम करते हुए कहा, "आप निश्चिन्त रहिए, आचार्य। चन्द्रगुप्त आपका शिष्य है, किसी दूसरे का नहीं।"

बाहर निकलने पर राक्षस प्रतीक्षा करता दिखाई पड़ा। चन्द्रगुप्तके साथ-साथ चलता हुआ वह बोला, "राजन्, यूनानका पुष्प संभवतः बहुत चंचल होता है। हवाके तनिकसे झोंकेसे ही वह गुदगुदीका अनुभव करता है।"

"जी हाँ," चन्द्रगुप्तने कहा, "परन्तु अपनी नज़रको रोकिये। यह नज़र, जो पत्थरको भी फोड़ देती है, बेचारे यूनानी फूलको बहुत महँगी पड़ सकती है।"

"हरे, हरे!" राक्षसने कहा, "तनिक मेरे बुढ़ापेका ध्यान करो, राजन्! हाँ, आचार्यको यह बात कहते, तो उचित हो सकता था। वह बुढ़ापेमें भी सजीव है।"

चन्द्रगुप्त राक्षसके साथ की हुई हँसीसे प्रसन्न होता हुआ पट्टरानीके महलमें पहुँचा, तो उसने देखा कि उनका मुँह फूला हुआ था।

"कहो, रानी," चन्द्रगुप्तने चादर उतारकर परिचारिकाके हाथमें देते हुए कहा, "यूनानी पुष्प कैसा लगा ?"

"ऐसा कि उसके आनेसे यहाँकी सारी वाटिकाके फूल खिलखिला कर हँस रहे हैं", रानीने श्लेषमें कहा।

"खिलखिला कर हँस रहे हैं! अर्थात् यूनानी पुष्प सभीको बहुत अधिक भाया है ?"

"इतना अधिक कि हँसते हँसते सभी पुष्पोंकी पंखड़िया झड़ी जा रही हैं!"

"ओह! पंखड़ियाँ झड़ी जा रही हैं! परन्तु यह श्लेष हम नहीं समझे। तुम कोई गंभीर बात कहना चाहती हो, रानी ?"

"गंभीर तो अब कुछ भी नहीं रहा। ऐसा लगता है कि या तो वह मूर्ख है और सारा रनिवास उसके साथ मूर्ख बन गया है। या फिर वह बुद्धिमती है और हम सब जन्मजात जड़ हैं!"

"अर्थात् ?" चन्द्रगुप्तने आश्चर्यसे पूछा।

"अर्थात् यह कि राजमहलकी प्रत्येक मर्यादा भंग हो रही है। किसीको सभ्यता, शालीनता, नीति-नियमका ध्यान नहीं। रानियाँ और दासियाँ एक ही पंक्तिमें खड़ी होकर हास्यालाप कर रही हैं और वह यूनानी छोकरी समझती है कि वह सेल्यूकस सेनापतिकी बेटी नहीं है, संसारके विधाता की बेटी है।"

"ओह! मालूम होता है मामला अनुमानसे भी अधिक गंभीर है," चन्द्रगुप्तने कहा। फिर उसने हेलेनकी सभी हरकतोंका पूरा चिट्ठा सुना। सुनकर हँसते हुए कहा, "सुनो, रानी, तुम संभवतः नहीं जानती कि हमने यह राजनीतिक विवाह किया है। शत्रुने हमसे मैत्री स्थापित करनेके लिए हमारे रक्तसे अपने रक्तका संबंध जोड़ना चाहा और राजनीतिक दृष्टिसे हम इनकार नहीं कर सके। अन्यथा उस यूनानी राजकन्यासे हमें कोई मोह नहीं था। तुम जानती हो तुम हमें सबसे प्रिय हो। उसके साथ हमारा

र वासनाका सम्बन्ध रह सकता है और अथवा प्रेमका नहीं फिर वह राजित शत्रुकी कन्या है। तुमसे अथवा अन्य रानियोंसे उसके ऊँचे केका तो कोई प्रश्न ही नहीं उठता। कुछ ही दिनोंमें वह समझ गी कि अन्य रानियाँ उसके कार्यकलापोंसे मुदित नहीं हो रही हैं, बल्कि उसीके ऊपर हँस रही है। तब वह गंभीर हो जायेगी।"

पट्टरानीके मिजाज कुछ नरम हुए। उसने उतरते हुए कहा, "कह थी कि 'मुझे मित्र बनाने बहुत पसंद है और मैं तीन रानियोंको ा मित्र बनाऊँगी क्योंकि तीन मित्र अच्छे होते है!' एक नई-नवेली और इतने अशिष्ट विचार प्रकट करे.. ! तीन मित्रोंमें क्या तर्क है? ऐसा न हो कि आपका यह राजनीतिक विवाह..."

"हम उसके लिए अलग एक छोटा-सा प्रासाद बनवा देंगे और कोई विशेष सपर्क नहीं रखेंगे," चन्द्रगुप्तने पट्टरानीको आश्वासन। "अब बताओ हम उसे कहाँ पा सकते है? हम स्वयं भी देखना हैं कि उसका व्यवहार कहाँ तक सहनीय है।"

पट्टरानीने बताया कि वह नाट्यशालामें है, जहाँ उसके लिए स्वागत-हिका आयोजन था। अन्तःपुरकी इस नाट्यशालामें केवल रानियाँ दासी-अभिनेत्रियाँ ही भाग लेती थीं। अपने धीर-गंभीर, शूरवीर मार्ग दिखाती हुई स्वय पट्टरानी उन्हें नाट्यशाला तक लिवा ले। वह चन्द्रगुप्तको दिखाना चाहती थीं कि किस प्रकार वह नई-नवेली कूदकर और अशिष्टतासे तालियाँ बजाकर नृत्यांगनाओंका नृत्य ही होगी!

पर पट्टरानी उतनी आशा नहीं कर सकती थी, जितनीके राज-वहाँ उपस्थित थे। नाट्यशालामें रग दूसरा ही था। वास्तवमें नारी और अभिनेत्रियोंके वेश धारण किये हुए अनेक दासियाँ मञ्चके सैनों ओर पक्तिबद्ध खडी थीं। रानियाँ अपने आसनोंपर चित्रलिखित-ी थीं—और मंच पर?

मंचकी एक ओर खड़ी गैलेशिया संगीतकी एक मधुर तालमें तालियाँ बजा रही थी और हेलेन सचमुच चपलाकी भाँति, अपने तीव्रगामी यूनानी नृत्यमें, कभी यहाँ कभी वहाँ कौंध रही थी। संगीतका एक समा बँधा हुआ था और अनेक रानियोंके सिर धुनके साथ-साथ हिल रहे थे। यूनानी अंगरक्षिकाओंमेंसे दो ने साज सँभाल रखे थे।

पट्टरानी कुछ कह रही थी। किन्तु चन्द्रगुप्त कुछ पलके लिए यूनानी संगीतकी नवीन मधुरतामें खो गया। फिर सहसा ही सजग होकर उसने कहा, "रानी, हम कल इसके लिए हेलेनकी तर्जना करेंगे।"

अगले दिन संध्यातक हेलेनके इस मौजी स्वभावकी चर्चा सारे पाटलिपुत्रमें फैल गई। समाचार यहाँतक उड़ा कि उसने सारे रनिवासको पागल बना रखा है और दो-चारको छोड़कर सारी रानियाँ उसके चक्करमें पड़ गई हैं। विशेष रूपमें छोटी आयुकी रानियाँ तो हेलेनको घेरे रहती हैं।

रातके समय चन्द्रगुप्तने जल्दी ही कौटिल्यसे विदा ली। हेलेनको रानीकी प्रतीक्षा करनेके लिए कहा गया था। उसे भारतीय साड़ी पहनाई गई थी, जो उसने बड़े चावसे पहनी थी। गैलेशिया और डीडो नवीन यूनानी वस्त्रोंमें सज्जित उसके साथ छायाकी तरह लगी थीं। चन्द्रगुप्त की एक अल्पवयस्क रानी अभी भी उसके साथ थी और वह उसे 'ट्रोजनकी लड़ाई' की कहानी सुना रही थी। तभी प्रतिहारीने उद्घोष किया।

"मौर्यकुलश्रेष्ठ, राजराजेश्वर, चक्रवर्त्ती, परम भट्टारक महाराज चन्द्रगुप्त मौर्य पधार रहे हैं.."

भारतीय रानीने कहा, "शेष फिर सुनूँगी। बहुत मनोरंजक कथा है। अब मैं जाती हूँ, बहन।"

"बहन नहीं, मित्र", हेलेनने मुसकराकर कहा।

"हाँ मित्र." कहकर रानी तत्परतासे द्वारके बाहर हो गई, जहाँ

द्वारमें प्रवेश करते हुए चन्द्रगुप्तने उसको उंगलीसे रुकनेका संकेत करते हुए कहा, "रानी, तुम यहाँ क्या कर रही थी ?"

"मैं, महाराज ? मैं रानी हेलेनसे एक यूनानी कथा सुन रही थी," रानीने उत्तर दिया।

"हूँ !" चन्द्रगुप्तने उसे तीव्र दृष्टिसे देखा। किन्तु वह नीची गरदन किये खड़ी रही। अन्तमें चन्द्रगुप्तने कहा, "अच्छा, जाओ।"

वह कमानसे छुटे तीरकी तरह लोप हो गई।

अब चन्द्रगुप्तने सामने जो दृष्टि की, तो भारतीय वेश-भूषामें हेलेन खड़ी दिखाई दी। दृष्टि अपनी ओर होते देखकर हेलेन बड़े जोरसे खिल-खिलाकर हँस पड़ी। उसने कहा : "मालूम होता है आज क्रोधमें हो !"

चन्द्रगुप्तने मौन रहकर हेलेनको दो क्षण तीव्र दृष्टिसे देखा।

मगर हेलेनको इस दृष्टिकी चिन्ता नहीं थी। वह बोली, "चन्द्रगुप्त, यह बड़ी अच्छी बात है कि तुम यूनानी जानते हो। नहीं तो हम तुम कुछ भी बात न कर पाते, और डीडो हमारी सारी योजनाएँ जान लेती।"

गैलेशिया होंठोंको दबाकर हँसी। डीडो चुपचाप कक्षसे निकल गई।

हेलेनने गैलेशियाको बनावटी स्वरमें डाँटा, "हँस मत, गैलेशिया। चन्द्रगुप्त क्रोधमें है। सारी योजना रखी रह जायेगी। वह घोड़ा निकाल-कर ला।"

गैलेशिया फुरतीसे एक बड़ी-सी पिटारीके पास गई और उसका ढक्कन उठाकर उसने उसमेंसे कुत्तेके आकारका एक घोड़ा निकाला। घोड़ा लकड़ीका बना हुआ था और एक तख्तेपर खड़ा था, जिसमें चार पहिये लगे थे। वह यूनानी कारीगरीका एक सुन्दर नमूना था। हेलेनने प्रसन्न होकर घोड़ेको एक बड़ी चौकीपर खड़ा किया। फिर वह उसके ऊपर हाथ फेरती हुई मग्न स्वरमें बोली, "यह स्पार्टनोंका घोड़ा है। हमें इतना बड़ा घोड़ा चाहिए, जो मंचपर आ सके। इसका नाटक देखकर सब चकित रह जाएँगे। जब इसके पेटके नीचेका ढक्कन खोलकर रस्सियोंके सहारे

सैनिक नीचे उतरेंगे और सोये हुए ट्रॉयनगरका विध्वंस करना आरम्भ करेंगे, तो सारी रानियाँ हैरतसे दाँतों तले उँगली दबा लेंगी। 'हेलेन'को ढूँढनेके लिए स्पार्टन सैनिक सबको रौंद डालेंगे। तुमने यूनानी पढ़ते समय वह कहानी पढ़ी है, चन्द्रगुप्त...'ट्रोजन-युद्ध' की कहानी...? अरे, तुम तो बोलते ही नहीं..!" और हेलेनने घूमकर चन्द्रगुप्तकी ओर देखा। वह चिल्ला उठी, "चन्द्रगुप्त!"

चन्द्रगुप्त क्रुद्ध दृष्टिसे उसकी ओर देख रहा था। उसकी ठोडी नीची हो गई थी और ऊँची उठी हुई पुतलियोंके चारों ओर लाल डोरे खिंच आये थे। गम्भीर स्वरमें वह यूनानीमें बोला, "सैल्यूकसकी बेटी. ."

हेलेनने उसे सुधारा, "नहीं, सैल्यूकस नाईकेटरकी बेटी..."

चन्द्रगुप्तने इसकी परवा नहीं की। उसका प्रौढ़ मुख अभी भी क्रोधसे तप्त था। वह बोला, "तुमने पाटलिपुत्रके राजभवनमें आकर एक उत्पात खड़ा कर दिया है। हमें लगता है कि हमने तुम्हारा हाथ थामकर एक बड़ी भूल की है। यह ठीक है कि तुम्हें भारतीय राजमहलोंकी मानमर्यादाका पता नहीं और तुम यूनानके उन्मुक्त वातावरणमें पली हो। लेकिन अगर तुम्हें यहाँ रहना है, तो तुम्हें यहाँकी मर्यादामें बँधना होगा..."

"यह क्या कह रहे हो, चन्द्रगुप्त!" आश्चर्यसे हेलेनने कहा, "यहाँ कोई उत्पात खड़ा हो गया है? हा हा हा हा! यह एक ही रही! क्या उत्पात है वह, सुनाओ तो?"

"हम भारतके राजराजेश्वर हैं...हमने अराकोशिया, गडोशिया, एरियाना जीता है और सैल्यूकस नाईकेटरने तुम्हारी शादी हमारे साथ इसलिए की है कि हमारे राजनीतिक सम्बन्ध अच्छे बने रहें। हम यह स्वीकार करते हैं कि तुम सुन्दर और वाचाल हो। मगर तुम हमारा नाम लेकर हमें इस तरह पुकार रही हो, जैसे हम तुम्हारे क्रीत दास हों. !"

हेलेन बड़े जोरसे हँस पड़ी। गैलेशियाको लक्ष्य करके वह बोली: "सुनो, गैलेशिया, भारत-सम्राट् चन्द्रगुप्तको अपने नामसे इतनी चिढ़ है कि

उसका मनावन भी उसे पसंद नहीं ! सुनो, चन्द्रगुप्तका और मेरा विवाह राजनीतिक विवाह मात्र है ! और सुनो गैलेशिया, मेरा पति मेरे सम्मुख अपनी जीतका अभिमान लेकर आया है ! वाह, वाह ! यह तो बड़ी बढ़िया पौराणिक कथा बनती जा रही है !" फिर उसने चन्द्रगुप्तकी ओर बच्चोंकी तरह झाँक कर पूछा, "तो तुम्हें अपने प्रिय पतिको क्या कहकर पुकारना चाहिए, चन्द्रगुप्त ?"

चन्द्रगुप्त झल्ला गया। वह बोला, "हमारी बात छोड़ो। तुमने हमारी अन्य रानियोंको बहन न बनाकर मित्र बनानेकी बात कही, और वह भी कुल तीनकी संख्यामें ! यह हमारी रानियोंका अपमान है।"

"बहुत अच्छे !" हेलेन तालियाँ पीटकर बोली, "तुम्हारी रानियाँ तो तुमसे भी ज्यादा गंभीर मालूम होती हैं। उनके साथ विनोद करनेसे उनका अपमान होता है ! ओह ! यह बात तो मेरे सम्मानित पिताने मुझे बताई थी कि भारतीय रमणियोंको शिष्ट विनोद पसंद नहीं। मगर मैं भूल गई. गैलेशिया, यह तीन मित्र बनानेकी बात किसने की थी ?"

गैलेशियाने अपना निचला होंठ फिर एक बार दबाकर कहा, "नाईकेटर एलेग्ज़ेंडरने, प्रिय हेलेन।"

"देखा तुमने ?" हेलेनने चन्द्रगुप्तसे कहा। फिर वह अपनी स्वाभाविक मुद्रासे हँसी। "तुम इतना भी नहीं समझ सकते, चन्द्रगुप्त, कि महान् वचन महान् विजेताओंके मुखसे ही निकलते हैं ! महान् सिकन्दरने ही यह कहा था कि अपरिचित स्थान पर मित्र बनाने चाहिए, यह सबसे पहला काम होना चाहिए, और वे संख्यामें तीनसे अधिक नहीं होने चाहिए। अब तुम जानना चाहोगे कि क्यों तीन और कैसे तीन—है न ?"

हेलेनके उन्मुक्त हास्यके सम्मुख चन्द्रगुप्त क्रोधकी सीमाको पार करनेमें अपनेको असमर्थ पा रहा था। वह झुँझलाया हुआ निश्चल खड़ा रहा और हेलेनकी वचनावलीको आगे सुननेके लिए उसने धैर्य बटोरा।

"तो सुनो", हेलेनने कहा, "तीन इसलिए कि यदि एक विमुख हो

जाये, तो शेष दो अपनी सम्मिलित शक्तिसे मित्र बनाने वालेकी रक्षा कर सकें, तीनसे अधिक हो जाने पर दलबन्दी खड़ी हो जाती है। और ये तीन मित्र होने चाहिये : एक साहसी, एक विद्वान्, और एक बुद्धिमान्। मगर अब तुम पूछोगे कि विद्वान् और बुद्धिमान्में क्या अन्तर है। इसके लिए तुम्हें उस्ताद अरस्तूका शिष्य बनना चाहिए था, जो सत्यके टुकड़े करके ही उसे परखनेमें विश्वास रखते हैं।"

चन्द्रगुप्तका रोष अब अदण्डित अपराधीके बराबर अपराध पर आग्रह किये जानेसे समतल हो गया था। वह बोला, "और आरती हो जानेके बाद महलके भीतर प्रवेश न करके, उस सफ़ेद हाथीपर हाथ फेरनेमें भी अवश्य ही महान् सिकन्दरका कोई दर्शन होगा!"

"हा हा हा हा!" यह बात सुनकर हेलेन चहचहाती हुई बोली, "गलेशिया, चन्द्रगुप्तको बताओ कि हमने वह विशाल हाथी क्यों देखा था—मालूम होता है मेरे पतिकी उत्सुकताकी मात्रा भी मुझसे कम नहीं है।"

"प्रिय हेलेन," गलेशियाने निःसंकोच भावसे कहा, "वह हाथी तो हम इसलिए देखने गये थे कि ट्रॉयकी हेलेनको जिस प्रकार फिरसे प्राप्त करनेके लिए स्पार्टनोंने लकड़ीका खोखला घोड़ा बनवाया था और उसमें अपने वीर छिपाकर रख छोड़े थे—जिससे ट्रॉयवाले उस घोड़ेको अपने किलेमें ले गये और रातके समय उन वीरोंने निकलकर अपनी सेनाओंके लिए ट्रॉयके किलेका मुखद्वार खोल दिया तथा ट्रॉयका फला-फूला नगर एक ही रातमें श्मशान बन गया—उसी तरह कहीं सम्राट् चन्द्रगुप्तने भी तो उस हाथीका निर्माण नहीं कराया था।"

"हा हा हा हा!" हेलेनने ठहाका लगाया, "तुमने देखा प्रिय चन्द्रगुप्त, यह शुद्ध और सात्त्विक उत्सुकताका काम था...।"

"हूँ!" चन्द्रगुप्तने कहा, "मगर तुम बहुत हँसती हो!"

"इसलिए कि यूनानी हँसना जानते हैं, मेरे चन्द्रगुप्त! तुम लोग

हमीसे भरते हो आश्चर्य ! उस्ताद अरस्तू कहते हैं कि यह जिन्दगी स्वयं एक बहुत बड़ा मज़ाक है, और जो इसमें हँसनेमें घबराता है उसपर भाग्य एक दिन बुरी तरह हँसता है।"

तीव्र स्वरमें चन्द्रगुप्त बोला, "हेलेन, तनिक अक्लसे काम लो। तुम्हें एक रानीकी तरह व्यवहार करना चाहिए.. ।"

"मैं इस बात पर विचार करूँगी कि रानीकी तरह व्यवहार करनेके लिए कितना हँसना और कितना रोना चाहिए। पर चन्द्रगुप्त, मेरा अत्यन्त विनम्र और गम्भीर निवेदन है कि कृपा करके एक पतिकी तरह व्यवहार करो। तुम सम्राट् हो दूसरोंके लिए, मेरे लिए केवल पति हो, जिसके साथ मुझे जीवन भर हँसना-खेलना है। तुमने मेरे आदरणीय पिता सैल्यूकस नाईकेटरको पराजित किया है, सैल्यूकसकी बेटीको नहीं। जाओ पहले अपने उस्तादसे पूछो कि हेलेनके जीवनका हास्य बन्द करनेके लिए चन्द्रगुप्तको क्या करना चाहिए।"

"हेलेन !" चन्द्रगुप्त चिल्लाया।

"चन्द्रगुप्त," हेलेनने पहली बार गम्भीर और नपे-तुले शब्दोंमें कहा, "मुझे ऐसी आशा नहीं थी कि पतिके रूपमें मुझे एक शासकके दर्शन होंगे। हेलेन वापस यूनान जायेगी।"

"हेलेन !" चन्द्रगुप्त ज़ोरसे चिल्लाया।

हेलेनने अपने स्वरकी सीमातक तीव्र होकर कहा, "नहीं, नहीं, हेलेन इस दम घुटनेवाले वातावरणमें नहीं रहेगी। यहाँ केवल रानियाँ ही रानियाँ हैं, नारियाँ नहीं हैं। तुमने आज मुझे रुलाया है, चन्द्रगुप्त। तुम सैल्यूकस नाईकेटरकी बेटीको जीवन भर रुलानेके लिए लाये हो। किन्तु यूनानकी बेटी इतनी जल्दी हार नहीं मानेगी। गैलेशिया, गैलेशिया, मेरी अंगरक्षिकाओंको बुलाओ। वापस यूनान जानेकी तैयारी करो...!" और वह खिलखिलाती हुई धूप सहसा ही अवसादकी सन्ध्यामें परिवर्तित हो गई। हेलेन फूट-फूटकर रोती हुई गैलेशियासे चिपक गई। गैलेशियाने

उसकी पीठपर हाथ फेरते हुए हिंसक शेरनीकी भाँति चन्द्रगुप्तको देखा। उसकी आँखोंमें तिरस्कार था।

अपमान और अप्रत्याशित काण्डसे हतबुद्धि, भारत-सम्राट्, शूरवीर चन्द्रगुप्त मौर्य पलभरके लिए किंकर्त्तव्यविमूढ हो गया। फिर पैर पटकता हुआ वह बाहर निकल गया।

उसी रात्रिको जब चन्द्रगुप्तके पास समाचार पहुँचा कि यूनानी अंगरक्षिकाएँ बहुत अधिक व्यस्त हैं और लम्बी यात्राकी तैयारियाँ कर रही हैं, उसने तुरन्त कौटिल्यके शयन-कुटीरके सामने पहुँचकर द्वार खट-खटाये। थोड़ी देरमें द्वार खुल गये।

"क्या है, वत्स?" कौटिल्यने मौर्यकुलपतिसे पूछा।

"आचार्य, मुझे आज फिर आपकी सम्मतिकी आवश्यकता है..." और उसने एक ही साँसमें सारी कथा आचार्य विष्णुगुप्त चाणक्यको सुना दी।

सब कुछ सुनकर विचारशील नेत्र ऊपर उठाते हुए चाणक्यने कहा, "चन्द्रगुप्त, जो बातें तुमने बताई हैं वे यदि अक्षरशः सत्य हैं, तो यह उद्दण्ड नारी सम्राटोंके घरमें रहनेके योग्य नहीं है। उसका परित्याग करना चाहिए। किन्तु ठहरो, इससे घरकी बात बाहर फूटेगी। यूनानी राजदूत मेगस्थनीजको पता चलनेसे पहले एक बार राक्षसकी सहमति ले लेना आवश्यक है।"

दोनों गुरु-शिष्य उसी समय राक्षसके भवनकी ओर चले। मार्गमें चलते हुए जब आचार्यके मस्तिष्कमें ठंडी हवा पहुँची, तो उन्होंने कहा, "वत्स, जल्दी निर्णय करना उचित नहीं। कूटनीतिसे काम लेना पड़ेगा।"

"परन्तु, आचार्य, यूनानी अंगरक्षिकाएँ और हेलेनके निजी सैनिक यात्राकी तैयारी तेजीके साथ कर रहे हैं..!"

वाटिकाको लाँघकर राक्षसके द्वारपर पहुँचना था। परन्तु उन्होंने आश्चर्यके साथ देखा कि राक्षस अखण्ड विचारमुद्रामें वाटिकाकी रविशों-

पर इधर-से-उधर चक्कर काट रहा है। जब चाणक्यने उसके कन्धेपर हाथ रखा, तो वह चौंक पड़ा।

चाणक्यने कहा, "लगता है इस गहन रात्रिमें गहरा विचार चल रहा है।"

राक्षसने सम्राट्को देखकर हाथ जोड़े और प्रणाम किया। फिर बोला, "विचार तो रात्रिमें ही सुगमतासे हो सकता है, आचार्य। मैं यूनानी दर्शनके बारेमें सोच रहा था, मुख्यतः इस बातपर कि सत्यके टुकड़े करके किस प्रकार उसकी परख की जा सकती है। हम भारतीय आंशिक सत्यसे किसी वस्तुमें सत्यकी स्थापना नहीं करते। परन्तु यूनानी दार्शनिक अरस्तू करता है। कैसे करता है मैं इसका कुछ अता-पता पा रहा हूँ।"

"तो फिर लीजिए, समस्या उपस्थित है। उस अतेपतेका प्रयोग इसपर कीजिए—"और चाणक्यने थोड़े और नपे-तुले शब्दोंमें राक्षसके सम्मुख नवीन समस्या रख दी। राक्षस सब कुछ चुपचाप सुनता रहा। फिर वह बोला :

"आर्यश्रेष्ठ, आप एक मनुष्य हैं—यह पूर्ण सत्य है ?"

"इस प्रश्नका उत्तर देनेकी आवश्यकता नहीं", चाणक्यने हँस कर कहा।

"किन्तु सम्राट्का मनुष्यत्व जब उनके अन्य गुणोंके सम्मुख रखते हैं, तो मनुष्यत्वका गुण पूर्ण सत्य न रहकर एक बड़े सत्यका अंश बन जाता है। सम्राट् 'असाधारण मनुष्य' हैं।"

चाणक्यने राक्षसको गहरी नजरसे देखा। फिर उन्होंने कहा, "मन्त्रिप्रवर, आपकी बात समझमें आनेवाली है।"

"इस असाधारण मनुष्यने सैल्यूकस नाइकेटरको जीता है इससे यह बड़ा सत्य एक और बड़े सत्यमें विलीन हो जाता है।"

"हूँ," चन्द्रगुप्तने हुंकारा भरा।

"और आर्यश्रेष्ठने कुमारी हेलेनका पाणिग्रहण किया, इससे सम्राट्ने



बेबीलोनिया, यूनान और भारतको एक सूत्रमें बाँध लिया, यह बात सम्राट्के व्यक्तित्वको एक अन्य पूर्ण सत्यकी ओर ले गई...।"

"ये तो सब स्थापित सत्य हैं, मंत्रीप्रवर", चाणक्यने कहा।

"अवश्य, यह एक सत्य नहीं, अनेक सत्य हैं—अथवा किसी पूर्ण सत्य के अनेक अंश हैं। किन्तु ये अंश न केवल अपनेमें पूर्ण ही हैं, बल्कि स्वयं अलग-अलग अनेक अंशोंसे निर्मित हैं। आर्यश्रेष्ठ सम्राट् हैं, विजेता हैं, पति हैं, मनुष्य हैं, प्रौढ़ मनुष्य हैं, स्वदेशाभिमानी हैं, और आर्य हैं। ये कुछ पूर्ण सत्य हैं, जो मिलकर एक बड़े पूर्ण सत्यका निर्माण करते हैं—कहिए सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्यके अस्तित्वका।"

"यहाँ तक तो मंत्रीप्रवर राक्षसकी बातसे सन्तुष्ट हुआ जा सकता है", चाणक्यने चन्द्रगुप्तकी ओर देखकर कहा, जिसके उत्तरमें सम्राट्ने 'हूँ' की।

"तब, आचार्य", राक्षसने कहा, "प्रत्येक कठिनाई विरोधाभाससे उत्पन्न होती है। विरोधाभास सत्यके अंशोंमें विपर्ययत्वसे उत्पन्न होता है। विपर्ययत्व तब उत्पन्न होता है, जब सत्यके किसी अंशको पूर्ण सत्य नहीं माना जाता..."

"अर्थात्?" चाणक्यने पूछा।

"अर्थात् सम्राट् एक पति हैं इसे आप और स्वयं आर्यश्रेष्ठ पूर्ण सत्य नहीं मानते, जिसके स्वयं अनेक अंश हैं। इन्हें केवल अन्य सत्योंके आश्रित मानते हैं। आश्रित वे हैं, किन्तु पूर्णतः नहीं।"

"और यदि आर्यश्रेष्ठ पति हैं इसे पूर्ण सत्य मानें, तो?" चाणक्यने प्रश्न किया।

"तो फिर आइये, इसके भी खंड करें। सम्राट्के पतित्वके अनेक अंश उनकी अनेक रानियाँ हैं, जो कुछ अंशोंमें पृथक् अस्तित्व रखती हैं, और कुछ अंशोंमें एकाकार हैं। पृथक् अस्तित्वमें आयु, स्वभाव, विचार, इच्छाएँ, आकांक्षाएँ आदि हैं, जिन्हें सम्राट् अपने बृहद् अस्तित्वके कारण अलग-अलग स्वीकार नहीं करते। सम्राट्को उस बड़े अस्तित्वका त्याग करके समयपर

केवल पति-रूप धारण करना पड़ेगा और प्रत्येक पृथक् अस्तित्वको आत्मसात् करनेके लिए भिन्न-भिन्न पति-रूप धारण करना पड़ेगा, नहीं करेंगे, तो विपर्यस्त खड़ा होगा, विरोधाभास उपजेगा, कठिनाई उत्पन्न होगी और वह संघर्षका रूप धारण कर लेगी।"

"शायद हम समझ रहे हैं—तब हेलनके बारेमें आप क्या कहते हैं, मंत्रीप्रवर ?"

"कहीं मेरी नज़र न लग जाये ?" राक्षस मुसकराया।

"ओह ! आप भी, मंत्रीप्रवर, बस एक ही हैं !" सम्राट्‌ने कहा।

"आपका यूनानी पुष्प अपना सर्वथा पृथक् अस्तित्व रखता है और यह एक पूर्ण सत्य है", राक्षसने गम्भीर होकर कहा। "शेष रनिवासकी मान-मर्यादा और आपके प्रौढ़ व्यक्तित्वके साथ उसका एकीकरण उसी दशामें सम्भव हो सकता है, जब आप इस स्थितिको पूर्ण सत्यके रूपमें स्वीकार कर लें। स्वीकारोक्ति मन, वचन और कर्म तीनोंसे होनी चाहिए। इन तीनों साधनोंमेंसे आपने अभी पहला साधन ही नहीं अपनाया है।"

"पहला साधन क्या होगा ?" चाणक्यने रस लेते हुए पूछा।

"मनसे आप एक अठारह वर्षकी चपल, उच्छृङ्खल, सरल, स्वदेशके अभिमानसे भरी यूनानी बालिकाको एक बीस-पच्चीस वर्षके चुस्त, चालाक, सरल और स्वस्थ भोले नवयुवकके रूपमें ग्रहण करें, और उसके सम्मुख आकर भूल जायें कि आप असाधारण मनुष्य हैं, विजेता हैं, सम्राट् हैं, भारतीय हैं, और प्रौढ़ हैं। स्वर्णकी सही परख करनेके लिए कसौटीको किसी-न-किसी अंशमें उसीका रूप धारण करना पड़ता है।"

"तो मैं उसके साथ बच्चोंकी तरह खेलूँ ?" सम्राट्‌ने आश्चर्यसे राक्षसका मुँह देखते हुए पूछा।

"एक अल्पायु, चपल और सरल यूनानी बालिकासे विवाह करके वह खेल आपने प्रारम्भ कर दिया है, आर्यश्रेष्ठ ! मेरा निवेदन केवल इतना है कि उस खेलको खिलाड़ीकी तरह खेलिए।"

"चलिये", चाणक्यने चन्द्रगुप्तसे कहा। "धन्यवाद, मंत्रीप्रवर!"

"आपको भी धन्यवाद, आचार्य", राक्षसने कहा। "यूनानी दर्शनका एक प्रयोग पूरा हो गया है और आपने शेष रात्रि मुझे चैनसे सोनेका अवसर दिया है।"

मार्गमें चाणक्यने कहा, "चन्द्रगुप्त, जिन कलाविदोंने यह काष्ठ-प्रासाद बनाया है, उनको इसी समय बुलाना होगा। तब तक आप हेलेनकी सखीको सूचित कराइये कि सार्थ परसों यूनानके लिए प्रस्थान करेगा।"

और जब हेलेनके पास यह समाचार पहुँचा, तो वह असाधारण रूपसे गम्भीर हो गई। परित्यक्ताके मनकी कड़वाहट उसके हृदयमें भर गई।

उस रात्रिके समाप्त होने तक राजभवनके मुख्यद्वारके सामने काष्ठ-कारोंके औजारोंकी ध्वनि होती रही।

हेलेनका अगला दिन बहुत तापपूर्ण रहा। उसने यूनानी अङ्ग-रक्षिकाओंको विभिन्न आज्ञाएँ दीं, जिनका अर्थ था कि केवल वही सामान लिया जाय, जो यात्रामें आवश्यक हो। यूनानी सैनिकोंको अगले दिन सुबह तक तैयार होनेके लिए कहलवाया गया। सारे दिन वह यूनानी पुराणोंकी कथाएँ पढ़ती रही। उनमें सभी तरहकी कथाएँ थीं—पति-मिलनकी भी, पति-विछोहकी भी, पतिघात और पतिवात्सल्यकी भी। उसकी समझमें कुछ नहीं आया। सन्ध्या तक उसकी हँसी, उसकी सरलता, उसकी सौम्यता उसके मुखपरसे तिरोहित हो गई।

रात आ गई और उसका दूसरा प्रहर बीतनेको हुआ। हेलेनकी आँखोंमें नींद नहीं थी। उसके पिता सैल्यूकस नाईकेटर क्या कहेंगे। यूनान क्या कहेगा। यूनानियोंके बारेमें भारतीय क्या सोचेंगे। क्या वह सचमुच आवश्यकतासे अधिक उच्छृङ्खल है?

तभी गैलेशिया बाहरसे दौड़ी दौड़ी आई, "हेलेन, प्रिय हेलेन, हमारा विचार गलत निकला..."

--कौन-सा विचार,? क्या गलत निकला ? हेलेनने पूछा ।

"हाथी वाला," गैलेशियाने जल्दीसे कहा, "उठो तो सही।" गैलेशिया और हेलेन एक सन्देशवाहिका यूनानी अङ्गरक्षिकाके साथ भागी-भागी, आँगन-पर-आँगन पार करती हुई महलके दूसरे भागके मुख्यद्वारके सामने खड़े उसी हाथीके पास आई, जिसे देखकर महलमें प्रवेश करते समय हेलेन आवश्यकतासे अधिक उत्सुक हो गई थी।

"यही न ?" गैलेशियाने अङ्गरक्षिकासे पूछा।

"हाँ", उत्तर मिला।

गैलेशियाने कान हाथीके पेटसे लगा दिया। फिर हेलेनको सङ्केत किया। हेलेनकी उत्सुकता फिर जाग्रत हो गई। हाथीके भीतरसे खट् खट्की हल्की-सी ध्वनि आ रही थी।

हेलेन अलग हटकर हाथीके पेटको ध्यानसे देखने लगी। उसी समय उसके पेटका नीचेवाला भाग हिला और एक चौकोर टुकड़ा उसमेंसे अलग होकर लकड़ीके कब्जों पर झूल गया। हाथीके पेटसे एक जंजीर बाहर निकली। आतङ्क, उत्सुकता तथा उद्वेगके साथ तीनों यूनानी रमणियोंने देखा कि उसके भीतरसे एक आदमी जंजीरपर झूलता हुआ नीचे उतर आया। नीचे आकर वह तेजीसे हेलेनकी ओर दौड़ा और उसे अपनी बाहुओंमें उठाकर एक ओरको भाग खड़ा हुआ।

यूनानी अङ्गरक्षिकाने चिल्लानेके लिए मुँह खोला, तो गैलेशियाने हथेलीसे उसका मुँह दबा दिया। फिर फुसफुसा कर बोलीः "पागल, जानती नहीं, वह स्वयं सम्राट् चन्द्रगुप्त हैं।"

अङ्गरक्षिकाका मुँह फटाका फटा रह गया।

सुबहको हँसते-मुसकराते हुए हेलेन अपने कक्षसे बाहर निकली और गैलेशियाको बुलाकर उसने कहा, "अब मैं वापस यूनान नहीं जाऊँगी। तैयारियाँ भङ्ग कर दी जायें।"

"क्यों ?" गैलेशियाने मुँहमें रूमाल दबाते हुए पूछा।

"क्योंकि सम्राट् गुरु कौटिल्यसे तुम्हारा विवाह करना चाहते हैं," हेलेनने मुसकराते हुए कहा।

गैलेशियाके मुखकी हँसी लोप हो गई। "नहीं, नहीं !" चिल्लाती हुई वह वापस दौड़ी चली गई और हेलेन अपने स्वभावके अनुसार खिलखिला-कर हँसती हुई अपने कक्षकी ओर लौट पड़ी।

सैल्यूकसकी बेटीके पृथक् अस्तित्वने सम्राट् चन्द्रगुप्तके मन-महल में अपना विशिष्ट स्थान बना लिया था।



• देश-द्रोही

सन् ६०४ ई० के दिन थे। बंगालका तत्कालीन शासक शशाङ्क युद्धमें जितना कुशल था, उतना ही अधिक नीतिनिपुण भी था। येन-केन-प्रकारेण विरोधीको मात देना उसकी प्रथम नीति थी। इस समय थानेश्वरके राज्यपर उसकी गिद्ध-दृष्टि थी। इस दृष्टिमें प्रकाश भरनेके लिए एक दिन एक विचित्र व्यक्तिने उसकी राजसभामें प्रवेश किया।

सभामें उस दिन हास्य-विनोदका रंग जमा हुआ था। शशाङ्क स्वयं इस हास्य-विनोदमें योग दे रहा था। वह बहुत प्रसन्न था। उस दिन उसने मदिराका सेवन नित्य-नियमका उल्लङ्घन करके किया था। चर्चा चल रही थी थानेश्वरके राजा राज्यवर्द्धनकी बहन राज्यश्रीको लेकर। अपने पिताकी अचानक मृत्यु हो जानेपर राज्यवर्द्धन कुछ ही दिन हुए राजगद्दीपर बैठा था।

एक मुँहलगा सभासद कह रहा था, "अन्नदाता, सुना है कि थानेश्वरकी देवी रोज पतिसे बंगालके फलोंकी माँग करती हैं। इस रोज़-रोज़के उलाहनेसे बचनेके लिए बेचारे मौखरिनरेशने महलोंमें जाना भी छोड़ दिया है।"

शशाङ्कके मुँहपर मुसकान आई और चली गई। "अरे, क्या तुम लोगोंमेंसे कोई ऐसा नहीं, जो देवीके पास समाचार भिजवा सके कि बंगालमें वाटिकाओंकी कमी नहीं है?"

एक अन्य राजपुरुषने कहा, "लेकिन, महाराज, यहाँकी वाटिकाएँ तो उठकर कन्नौज नहीं जा सकतीं। वहाँसे देवी स्वयं आयें, तो चाहे बंगालके फल खायें, चाहे यहाँकी वाटिकाओंमें..."





स्वयं ही गढ़ने लगे.. हा...हा.. हा!" शशाङ्कने मनके भीतर छिपे [illegible] प्रकट करते हुए एक भारी ठहाका लगाया।

उसी समय द्वारपालने सूचना दी : "महाराज, एक उद्दंड विद्यार्थी आपके चरण स्पर्श करना चाहता है। उद्देश्य नहीं बताता। हटानेसे हटता नहीं है।"

शशाङ्क एकदम गम्भीर हो गया। "तो किसीके पुण्यका भागी बननेमें तू क्यों रोड़ा अटकाता है, रे? आने दे।"

सभाने देखा कि एक उन्नत ललाटवाले युवकने भीतर प्रवेश किया। उसके पैरोंमें एक स्वच्छ धोती थी। शरीरपर एक चादर इस प्रकार लिपटी हुई थी कि उसका बायाँ हाथ उससे पूराका पूरा ढँक गया था। सीधे-सीधे आकर वह ठीक शशाङ्कके सामने रुका और अपना बायाँ हाथ ऊपर उठाकर उसने कहा, "राजन्, कल्याण हो।"

शशाङ्कने पूछा, "तुम कौन हो? क्या चाहते हो?"

"मैं तक्षशिलाका स्नातक कौण्डिन्य हूँ। श्रमात्मकी राजसेवाका अवसर चाहता हूँ। महाराजके उपसेनापतिका पद चाहता हूँ।"

सभामें उपस्थित सारे राजपुरुष दाँतोंमें उँगली देने लगे। कोई छोटा-मोटा पद नहीं, सीधे उपसेनापतिका पद! जिस सभासद्ने राज्यश्रीके प्रसङ्गमें शशाङ्कका मनोरञ्जन किया था वही बोला, "क्या तक्षशिलासे कोई गधा स्नातक बनकर नहीं निकलता? हमारी सेनामें उपसेनापतियोंकी नहीं, कुछ गदहोंकी आवश्यकता है, जो कन्नौज तक फलोंकी वाटिकाओंको ले जा सकें।"

देखते-देखते विद्यार्थीके मुँहपर रक्तकी लाली उभर आई। राजा शशाङ्क हँस पड़ा। उसने सभासद्की ओर उँगली उठाकर कहा, "पीताम्बर, तक्षशिलाके स्नातकके प्रति यह व्यवहार भद्रोचित नहीं है।"

लेकिन विद्यार्थीका क्रोध सीमा पार कर चुका था। उसने स्पष्ट और तीखी वाणीमें कहा, "नहीं, तक्षशिलाके महान् विश्वविद्यालयसे गधे

स्नातक बनकर तो नहीं निकल पाते, लेकिन कुछ पीताम्बर गधे रस्सा तुड़ा कर कभी-कभी निकल भागते हैं। पकड़ पानेपर ऐसे गधोंकी मरम्मत वहाँ अच्छी तरह हो जाती है।"

पीताम्बर विचलित होकर इस तरह खड़ा हो गया, जैसे बँधे हुए बाँसका बन्धन खुल जानेपर वह उछलकर खड़ा होता है। उसकी तलवार बाहर खिच गई। उसने चिल्लाकर कहा, "महाराज शशाङ्ककी सौगन्ध, जिस व्यक्तिकी मरम्मत यहाँ पर होगी, उसके माथेपर गर्दभराजकी मोहर दागी जायेगी। सावधान, पीताम्बरने हर युद्धमें गिनकर नौ महारथियोंका सहार किया है।"

और वह उत्तेजित अवस्थामें आगे बढ़ा। निरीह विद्यार्थीने एक राजसभामें इस विचित्र प्रकारकी उद्दण्डताको निरखकर महाराज शशाङ्ककी ओर देखा। शशाङ्क हँस पड़ा। अपनी कमरसे खड्ग निकालकर उसने युवक विद्यार्थीकी ओर फेंक दिया। "सँभालो !" उसने नशीले स्वरमें कहा, "योद्धाओंके साथ बातें करनेमें जीभको ही सबसे अधिक श्रम करना पड़ता है।"

युवकने ऊपर आते हुए खड्गको सँभालनेकी चेष्टा की, किन्तु तब तक शत्रु सिरपर आ पहुँचा। युवकने विचित्र फुरतीके साथ झुककर शशाङ्कके आते हुए खड्गको अपने दायें कन्धेसे टकराकर भूमिपर गिर जाने दिया और जब तक यह कार्य सम्पन्न हुआ, तब तक पीताम्बरकी कमरसे बँधी हुई कटार निकालकर उसका बायाँ हाथ उसके खड्गके वारको रोक चुका था। खड्गकी धार कटारके फल और कब्जेके जोड़पर जाकर झनझना उठी। इतनी लंबी तलवारका सन्तुलित वार इतनी छोटी कटारपर रोक लेनेके लिए जिस शक्तिकी आवश्यकता है, उसका यह प्रत्यक्ष प्रदर्शन देखकर शशाङ्क सहित उसके समस्त सभासद् चौंक उठे।

इसके बाद कटार और खड्गका यह अद्भुत युद्ध आरम्भ हुआ। एक

तरफ तौल-तौलकर सधे हुए हाथ खड्गका वार कर रहे थे, तो दूसरी ओर साक्षात् चपल विद्युत् उन्हें बचा रही थी। प्रदर्शन बेजोड़ था। किन्तु दर्शनीय था। 'आक्रमणका खड्ग सँभल-सँभलकर गिर रहा था, लेकिन कटारके कलेवरके अतिरिक्त वह तक्षशिलाके विद्यार्थीके शरीरको नहीं छू सका।

निकट ही था शशाङ्क कि इस असमान युद्धको बन्द करनेकी आज्ञा देता कि विद्यार्थी देखने योग्य चपलताके साथ हवामें उछला। तीन काम एक साथ हुए: युवकके शरीरके भारी धक्केसे नया वार करनेकी मुद्रामें शशाङ्कका वीर योद्धा पीठके बल भूमिपर गिरा, उसके गिरते ही विद्यार्थी उसकी छातीपर सवार हो गया और उसने अपनी कटार हवामें उठाई। नीचे पड़ा योद्धा सहसा घिघिया उठा—"नहीं, नहीं!" आज हास्य-विनोदके दिन यमलोक सिधारनेका उसका इरादा नहीं था।

शशाङ्कने सिंहासनसे उठते हुए कहा, "युवक, हम वीरोचित पुरस्कारसे तुम्हें लाद देंगे। इस कायरको छोड़ दो।"

किन्तु युवकने यह सब कुछ नहीं सुना। पराजित नराधमके प्राण उसके बसमें थे। उसकी कटार उसकी आँखोंके आगेसे गुज़रती हुई नीचे उतरी, वाक्पटु योद्धाके माथेतक उतरी, कुछ देर वहाँ ठहरी रही और सभाने देखा कि अधोगत व्यक्तिके हाथसे आतङ्कके कारण छुटी हुई खड्गको विजेता पैरोंसे ठोकर मारकर, बिना अपने राजसी आखेटके प्राण लिये ही, उसकी छातीपर से उठ खड़ा हुआ।

उसके उठते ही आँखें फाड़े विजित योद्धा उठा। सहसा ही सब लोगोंकी नजरें उसके माथेपर जा टिकीं। वहाँ कटारकी नोकसे खूब गहरा गुदा हुआ था यह शब्द: "गर्दभराज!"

सहसा चीख मारकर पीताम्बरने अपना माथा ढक लिया।

युवक अपने दाँत चिकल रहा था। उसकी कटारकी नोक खूनसे तर थी। उसके गालोंकी अस्पष्ट हड्डियाँ रह-रहकर स्पष्ट हो जाती थीं। उसने

भूमिपर माथा पकड़े हुए व्यक्तिको तिरस्कारकी भावनासे देखते हुए कहा, "हमारे विश्वविद्यालयमें रस्सा तुड़ाकर भागे हुए गधोंकी इस तरह मरम्मत होती है।"

लेकिन सभा विस्मयविमुग्ध थी। शशाङ्ककी नजरें युवकके शरीरपर ही थीं। वह अपने सिंहासनसे नीचे उतर आया। अपना दायाँ हाथ आगे बढ़ाकर उसने कहा, "हाथ आगे बढ़ाओ। जिस प्रचण्ड योद्धाके बायें हाथमें इतना बल है, हम देखना चाहते हैं उसके दायें हाथमें एक राजासे हाथ मिलाने योग्य उष्णता है या नहीं।"

लेकिन युवक चुप खड़ा रहा। केवल उसका दाँत निकलना बन्द हो गया था और वह निर्निमेष दृष्टिसे बंगालके शासकको देख रहा था।

शशाङ्क एक पग और आगे बढ़ा। "तुम्हारे सोच-विचारका समय जाता रहा। समृद्धियोंका कोश तुम्हारे लिए अब खुला पड़ा है।" और यह कहकर उसने युवकके निस्पन्द दायें हाथको हाथ बढ़ाकर पकड़ना चाहा। किन्तु सहसा ही वह चौंक उठा। उसने झपटकर युवककी उस चादरको, जिसकी गाँठ पीठके पीछे कसकर बँधी हुई थी, झटकेके साथ उसके दायें हाथके कन्धेसे उघाड़ दी। फिर सारी राजसभाने सहसा कलेजा थामकर देखा: युवकका दायाँ हाथ कुहनीके ऊपरसे कटा हुआ था, और कटे हुए स्थानपर अभीतक एक खूनसे तर पट्टी बँधी हुई थी। युवकके पास वास्तवमें दायाँ हाथ था ही नहीं।

शशाङ्कका सारा नशा हिरन हो गया। वह मुग्ध नेत्रोंसे उस कटे हुए हाथको निहारता हुआ डगमगाते कदमोंसे पीछे हटा। एक साथ उसके मस्तिष्कमें अनेक प्रश्न चौंधिया गये। यही नहीं, सारे राजपुरुषोंके दिमागोंमें वे चक्कर काट रहे थे। यह अपूर्व योद्धा वास्तवमें कौन है? कहाँसे आया है? क्यों आया है? यदि कहीं इसके दोनों हाथ होते तो. .।

शशाङ्क अपने सिंहासनपर पहुँच चुका था। कुछ सुस्थिर होकर उसने पूछा, "तुम कौन हो?"

"तक्षशिलाका एक स्नातक। मेरा नाम कीर्त्ति है...कीर्त्तिसेन।"

"यह हाथ कैसे और कहाँ कटा?"

"महाराज राज्यवर्द्धनके दण्डालयमें उन्हींकी आज्ञासे", युवकने उत्तर दिया, "राजद्रोहके अपराधमें।"

"क्या अपराध किया?"

"अपराध किया नहीं था, उसका आरोप किया गया था। उस आरोपके अनुसार मैंने महाराज प्रभाकरवर्द्धनकी हत्यामें हत्यारेकी सहायता की थी। मैं ही उस समय महाराजके कक्षमें था, उन्हें विष दिया गया था। सीधी हत्याका अपराध मुझपर सिद्ध नहीं हो सका, इसलिए सन्देह मात्रने राज्यवर्धनने मेरा हाथ कटवा दिया।"

"केवल हाथ ही कटवाकर छोड़ दिया!" शशाङ्कने विस्मय प्रकट करते हुए कहा, "मारा नहीं?"

"हमने तक्षशिलामें एक साथ शिक्षा प्राप्त की थी," युवकने उत्तर दिया। "मेरा बड़ा भाई जयकीर्त्ति राज्यवर्द्धनका उपसेनापति है। केवल सन्देहमात्रपर राज्यवर्द्धन मुझे जानसे नहीं मार सका।"

"हूँ!" शशाङ्क कुछ देर तक विचारमुद्रामें तल्लीन रहा। इसके बाद सहसा उसने अपना मुँह ऊपर उठाकर घोषणा की: "हम युवक कीर्तिसेनको अपना उपसेनापति घोषित करते हैं। युवक बंगालके द्वारा दिये हुए इस सम्मानकी रक्षा करे।"

युवकने अपना शीश फिर एकबार झुकाया और गर्वसे सारी सभाको निरखता हुआ वह वापस राजद्वारकी ओर लौट गया।

उसके जानेके बाद भी बहुत देर तक राजसभामें सन्नाटा छाया रहा। फिर आपसमें कानाफूसी आरम्भ हुई। पराजित पीताम्बरको सब लोग भूल

ही गये थे जो मस्तिष्ककी पीडाके कारण राजसभाके बीचमें ही पसर गया था। कुछ ही समयमें सारी राजसभा चेतन हो गई।

शशाङ्कने आज्ञा दी, "इस युवकको हमारे भेंट-कक्षमें लाया जाय!"

राजसभा विसर्जित कर दी गई और शशाङ्क अपने महलोंमें लौट गया। जब वह अपने भेंट-कक्षमें पहुँचा, तो वही युवक, कीर्तिसेन, उसी प्रकार चादरको लपेटे, कक्षके एक कोनेमें एक ऊँचे आसनका सहारा लिये खडा था। शशाङ्कने उसे देखते ही एक विमोहित व्यक्तिकी भाँति खिलकर कहा, "सुन्दर, अति सुन्दर! तुमने एक ही वारके कौशल-प्रदर्शनसे वङ्गभूमिका मन जीत लिया है।"

"वङ्गाधीश्वर", युवकने सीधे होकर उत्तर दिया, "आपकी इन प्रशंसात्मक उक्तियोंके लिए मैं आपका धन्यवाद करता हूँ। किन्तु कृपा करके मुझे अपनी स्थितिसे ऊँचा उठानेकी चेष्टा न कीजिये।"

"तुम योद्धा ही नहीं, महान् विभूति भी हो!" शशाङ्कने और भी प्रसन्न होकर कहा, "युवक, यह निश्चय है कि तुम एक दिन थानेश्वरकी विजय करोगे। पृथ्वी तुम्हारे पदतलके प्रहारसे काँप उठेगी।"

"नहीं, वङ्गपति, खेद है कि मेरा यह स्वप्न नहीं है। मैंने तक्षशिलाके महान् विश्वविद्यालयमें दसियों वर्ष तक राजनीतिका अध्ययन किया है। मुझे ज्ञात है कि थानेश्वरकी विजय मेरी हाथकी रेखाओंमें नहीं है। इसके अतिरिक्त, थानेश्वर मेरी जन्मभूमि है। मैं मातृद्रोही नहीं हूँ।"

शशाङ्क जैसे आकाशसे गिर पड़ा। एक ओर युवककी वीरता उसके हृदयमें घर कर चुकी थी। उसके माध्यमसे वह थानेश्वरको अपने चरणोंमें लोटता हुआ देख रहा था। दूसरी ओर, युवकने एक ही वाक्यसे उसके स्वप्नोंको चूर कर दिया था। वह बोला, "आश्चर्य है, फिर भी तुमने हमारे उपसेनापतिका पद माँगनेकी स्पर्द्धा की!"

युवक एक उदासीन हँसी हँसा। "मैंने ठीक किया है, वङ्गपति।"

उसके नेत्रोंकी ज्योति वातायनके पार फैलती हुई सूर्यकी ज्योति पर जा टिकी। "मैंने आपके उपसेनापतिका पद इसलिए ग्रहण किया है कि मेरे और आपके राजनीतिक स्वार्थ एक अंशमें मिलते है। थानेश्वरके मार्गमें कन्नौज पड़ता है। कन्नौज विजय करके अपनी प्रेयसी राज्यश्रीको ग्रहवर्मनके परिणय-पाशसे मुक्त करना आपकी चिर अभिलाषा है। अदूरदर्शी राज्य-वर्द्धनको अपने हाथसे मारकर प्रतिशोधकी आग बुझाना मेरी अभिलाषा है। ये दोनों अभिलाषाएँ तभी पूर्ण हो सकती है, जब वङ्गभूमिके उप-सेनापति पदपर कीर्त्तिसेन हो। राजनीतिके कठोर धरातलपर मैं और आप दोनों अपने-अपने लक्ष्योंको स्पष्ट देखकर मैदानमें चले, तो भविष्यमें एक दूसरेकी ओरसे भ्रम उत्पन्न होनेका स्थान नहीं रहेगा।"

शशाङ्क इस विचित्र युवककी राजनीतिको शान्त चित्तसे पी रहा था। जब उसने ग्रहवर्मनकी चर्चा की थी, तो उसके दाँत भिच गये थे। जब राज्यश्रीका प्रसङ्ग आया था, तो उसके मुँह पर प्रलोभनकी छाया स्पष्ट दिखाई देती थी। इसके विपरीत, उसे दिखाई दिया कि उसका सामना जिस युवकसे हुआ है वह प्रतिशोधके अतिरिक्त समस्त मानवी प्रलोभनोंसे मुक्त है। ठीक भी है, जिस आततायीने एक सन्देह मात्रपर उसके जीवनकी सर्वप्रिय वस्तु, उसके दायें हाथसे उसे वंचित कर दिया था, उसके सिरको भूमिपर लोटा हुआ देखनेकी अभिलाषा उचित और स्वाभाविक थी। शशाङ्कने शंकित मनसे कहा, "युवक, लगता है कि तुम इस तथ्यकी ओरसे चेतन हो कि तुम एक देशद्रोही हो। ऐसी दशामें हमारे सम्मिलित स्वार्थकी पूर्तिमें क्या कोई बाधा आनेकी सम्भावना नहीं है?"

"नहीं," कीर्त्तिसेनने दृढ़ताके साथ कहा। जहाँ तक इन स्वार्थोंकी सीमा निश्चित है, वहाँ तक कीर्तिसेनका यह बचा-खुचा बायाँ हाथ और सैन्य-सञ्चालनका समस्त चातुर्य वङ्गपतिके साथ रहेगा। मैं महान् गुरु-कुलका स्नातक हूँ, असत्यका सम्भाषण पाप समझता हूँ। मैं देशद्रोही हूँ या नहीं यह बात अभी विवादास्पद है।"

शशाङ्क एक क्षण तक मौन खड़ा रहा। फिर उसने कहा, "जो बात है। हमें अपने उपसेनापतिकी ये शर्तें स्वीकार है।"

युवक हँसा, "तब मेरी राजनीतिकी पहली किस्त लीजिए। इस कामके लिए आपको मालवा नरेश देवगुप्तसे सन्धि करनी पड़ेगी।"

"यह तो असम्भव है।" शशाङ्कने चौंककर कहा। "वङ्ग और मालवाका सात पीढ़ीसे विरोध है। हम मालवा जीतना चाहते हैं और देवगुप्त बंगालके स्वप्न संजोये हुए है। यह सन्धि तो हो ही नहीं सकती।"

"नहीं, बंगपति," युवकने उत्तरमें कहा। "राजनीतिक लक्ष्य पूर्ण करनेके लिए सम्पूर्ण लक्ष्य लेकर आगे नहीं बढ़ा जाता। उसे अंश-अंश करके पूरा किया जाता है। मालव-नरेशको वङ्गभूमि हथियानेके लिए कन्नौज पहले लेना पड़ेगा क्योंकि मार्गमें कन्नौज पहले पड़ता है। वह इसके लिए तुरन्त तैयार हो जायेगा। वह राज्यश्रीको आपके हाथों सौंपनेके लिए तैयार हो जायेगा क्योंकि उसे स्त्री नहीं चाहिए, भूमि चाहिए, बंगालको जीतनेके लिए आधार चाहिए, जहाँ खड़ा होकर वह तीर फेंक सके।"

शशाङ्कका चेहरा इन कटूक्तियोंको सुनकर उतर गया। "युवक," उसने कहा, "तुम हमारी भर्त्सना कर रहे हो! हम राज्यश्रीको रानीके रूपमें ग्रहण करना चाहते है, एक मामूली कृषककी स्त्रीके रूपमें नहीं। हम उसके लिए बंगालको मालवा-नरेशके हवाले नहीं कर सकते।"

युवक इस बार ठहा मारकर हँसा, "महाराज शशाङ्क, आप सचमुच बहुत भोले हैं। क्या आप इतना भी नहीं जानते कि कन्नौजका सारा राज्य राज्यश्रीके रूप और गुणके सामने शीश झुकाता है? मौखरी प्रजा उसपर जान निछावर करती है। मालव-नरेशको इस सन्धिके फलस्वरूप भूमि मिलेगी और आपको उस भूमिपर रहने वालोंके हृदय मिलेंगे। समय आने पर राज्यश्रीका एक इङ्गित मौखरी राज्यके एक-एक तीरको मालव-

नरेशके हृदयपर केन्द्रिय कर देगा। भूमिका प्यासा नरेश स्वयं आन्तरिक क्रान्तिसे मारा जायगा।"

"ओह!" शशाङ्ककी भौंह आश्चर्यसे ऊँची हो गई। उसने दौड़कर युवकके कन्धे झिंझोड़ डाले। "तुम्हारी राजनीतिक सूझ-बूझ अपूर्व है..। तुम्हारे साथ मैत्री स्थापित करनेमें हमें गर्व है।"

युवकने अपने बायें हाथसे उसके दोनों हाथोंको एक-एक करके कंधों परसे हटा दिया, उसने कहा, "राजन्, ध्यान रखिए, राजाओंको उस समय तक प्रेम नहीं करना चाहिए, जब तक उसमें राजनीतिक स्वार्थ न हो।"

शशाङ्कके पास कोई उत्तर नहीं था।

उसी दिन मालव-नरेशके पास सन्धिपत्र भेजा गया। उसका एक-एक शब्द बंगालके नवीन उपसेनापतिके मुँहसे निकला था। आशाके अनुकूल प्रतिक्रिया हुई और मालव-नरेश फैलाये हुए जालमें भूखे पक्षीकी तरह आ फँसा। साथ ही उसने उसे क्रियात्मक रूप दिया। राज्यवर्द्धनका ध्यान उत्तरके हूणोंकी ओर केन्द्रित पाकर उसने अपनी विशाल सेनाओंको मौखरी राज्यकी ओर बढ़ा दिया। इधरसे एक हाथका सेनापति बंगालकी थोड़ी-सी चुनी हुई सेनाओंको लेकर कन्नौजकी ओर बढ़ा। यही नहीं, उसके पीछे शशाङ्क शेष बड़े भागका नेतृत्व अपने हाथमें लेकर, योजनाके अनुसार, अपने उपसेनापतिके पदचिह्नों पर चल पड़ा।

कन्नौज सहसा ही दो चक्कोंके बीचमें पिस गया। जिस समय मालव-नरेश कन्नौजपति ग्रहवर्मनका सिर काटकर, उसके रुधिरसे लाल खड्ग लिये, किलेके अतपटसे बाहर निकला, युवक जीतमें अपना भाग बँटानेके लिए उपस्थित था। मालव-नरेश क्षुद्रबुद्धि शशाङ्कके प्रतिनिधिको देखकर हँसा। उसने कहा, "जाओ, कन्नौजके राजमहलमें वह 'स्त्री' तुम लोगोंकी प्रतीक्षा कर रही है।"

युवकने भी हँस कर उत्तर दिया, "बधाई है, राजन्, आपने बंगालका पहला द्वार जीत लिया है।" और इससे पहले कि मालव-नरेश स्वयं

मुहसे ये शब्द सुनकर उनका अर्थ लगा पाये कीर्त्तिसेन आगे बढ़ गया। पीछे मालव-नरेश सोचता ही रह गया — ये लोग अपनी स्थितिकी ओरसे चेतन है।"

जिस समय युवक कीर्तिसेन कन्नौजकी रानीके कक्षमें पहुँचा, उसके मुखपर लालिमा आँखमिचौनीका खेल खेल रही थी। एक दिन पहले वह कन्नौजकी सर्वेसर्वा थी। आज एक लुटी-पिटी विधवा थी। परिस्थितियोंके दुर्दाम चक्रने उसका राज्य और श्री दोनों लूट लिये थे। जब उसने इस चक्रके प्रणेताको अपने कक्षके द्वारपर खड़ा पाया, तो वह चौंक पड़ी।

"कौन, कीर्त्तिसेन, जयकीर्त्तिका भाई।"

"हाँ, मैं ही हूँ," कीर्तिसेनने भीतर पग रखते हुए कहा। "मैंने आपकी युगोंसे सञ्चित साध पूरी की है। आपका हृदयेश्वर, राजा शशाङ्क, कन्नौजकी राह पर है और सन्ध्या तक आया ही चाहता है।"

राज्यश्रीका मुख लज्जा, अभिमान और परितापके मिश्रित आवेगसे तमतमा गया। वह आहत बाघिनकी तरह उठ खड़ी हुई और उसकी मुट्ठियाँ भिंच गईं। विषमें बुझे हुए तीरोंकी तरह उसके मुँहसे शब्द निकले।

"नीच, जिस प्रकार तू देशद्रोही है, उसी प्रकार मुझे भी विश्वास-घातिनी समझता है। क्या तुझे मालूम नहीं कि मैं उस राज्यवर्द्धनकी बहन हूँ, जिसके प्रतापसे आज पृथ्वीकी दसों दिशाएँ काँप रही हैं? क्या मैं एक आर्य नारी होकर अपने पतिके अतिरिक्त किसी अन्य पुरुषका चिन्तन भी कर सकती हूँ? सच है, एक देशद्रोहीके अतिरिक्त किसीमें इतनी कुबुद्धि नहीं हो सकती कि वह अपनी विकृत भावनाओंकी कसौटी-पर एक सुशील नारीकी भावनाओंको परख सके।"

युवक कीर्तिसेनके हाथोंके तोते उड़ गये। उसे मालूम हुआ कि वह इस प्रकार बीच मैदान खड़ा है, जहाँ सिर मुँड़ाते ही ओले पड़े हों! जब एक असफल राजनीतिज्ञ सहसा ही यह देखता है कि उसकी कूटनीति केवल एक निम्नस्तरकी आत्मप्रवञ्चना थी, तो सम्भवतः उसके जैसी दयनीय

स्थिति संसारमें किसी बुद्धिजीवीकी नहीं होती। जितनी देर राज्यश्री बोलती रही उतनी देर वह उसकी ओर आँखें फाड़े देखता रहा। फिर प्रयत्न करके उसने अपनेको संयत किया।

"देवी, प्रतीत होता है कि मैंने अपने जीवनकी सबसे बड़ी भयङ्कर भूल की है। अब और कोई नहीं, केवल मेरा हृदय जानता है कि मैं अदृष्ट रहकर अपने स्वार्थके साथ-साथ आपकी आकाङ्क्षा-पूर्तिमें योग दे रहा था। बंगालमें भ्रमण करते समय मुझे जनश्रुतियोंसे ही यह पता चला था कि आप शशाङ्ककी ओर आकृष्ट हैं। स्वयं राजा शशाङ्कने एक बार भी इस धारणाका खण्डन नहीं किया। मेरी शत्रुता आपसे नहीं, आपके भाई राज्यवर्द्धनसे है। एक आर्यनारीके रूपमें आप मेरी पूज्या हैं। मैंने अपनी भूलसे एक ऐसा खेल खेला है, जिसमें एक परमपूजनीया आर्य-नारीका सर्वस्व लुट गया है। ओह, मुझे दुःख है कि यह भूल कलङ्क बनकर सदा ही मुझे डसती रहेगी! किन्तु, देवी, मैं देशद्रोही नहीं हूँ। मैंने अपनी मातृभूमिको शत्रुके हाथों नहीं बेचा है।"

कीर्त्तिसेनकी बातें सुनते-सुनते राज्यश्री परितापके आवेगसे कातर हो उठी। उसने कहा, "अब भी तुम्हें यह कहते लज्जा नहीं आती कि तुम देश-द्रोही नहीं हो? कन्नौज वर्द्धन-साम्राज्यका प्रहरी था। यह कन्नौज ही था, जो छाती तनाये पूर्वसे बंगाल और पश्चिमसे मालवाके आक्रमणसे वर्द्धन-राज्यके दक्खिनी द्वारकी रक्षा कर रहा था। तुमने दोनों विरोधी शक्तियोंको एक करके इसे बीचमें रखकर पीस डाला, मेरे प्राणोंसे प्रिय पतिकी हत्या कर डाली। अरे, पापी, तूने मेरी आकाङ्क्षा पूरी नहीं की, अपने देशका द्वार शत्रुके लिए खोल दिया है!"

"नहीं, नहीं, देवी, ऐसा न कहिए", कीर्त्तिसेनने भी उसी भाँति कातर होकर उत्तर दिया। "यह द्वार अभी बन्द है। इस द्वारकी रक्षा करनेवाला मेरी योजनामें भी जीवित था और अब भी जीवित है। यदि आप शशाङ्ककी रानी बनतीं, तो भी अपनी प्रमुख शक्तिके द्वारा वर्द्धन-

साम्राज्यका जीतनेका स्वप्न उसके हृदयसे तिरोहित कर सकती थीं। कन्नौज का प्रजा-हृदय उस समय भी आपका रहता और अब भी आपका है। आप चाहें, तो वर्द्धन-साम्राज्यका यह दक्खिनी द्वार अब भी बन्द रहेगा।"

"हूँ!" राज्यश्री हुंकारी। "तुम्हारे पापका प्रायश्चित्त तो मुझे करना ही होगा, किन्तु जीवित रहकर नहीं, अपने पतिके साथ सती होकर। कन्नौजकी रक्षा करनेके लिए राज्यवर्द्धन सन्ध्या तक आया ही चाहता है।"

"नहीं, आप सती नहीं होंगी, देवी! आपके पलायन करते ही यह द्वार खुला रह जायगा। राज्यवर्द्धनको मेरी प्रतिशोधकी आगमें भस्म होना ही पड़ेगा। भगवान् जानता है कि मेरी शत्रुता अपने देशसे नहीं, अपने देशके एक व्यक्तिसे है। संयोगसे वह व्यक्ति वर्द्धन-साम्राज्यका अधिपति है। एक अधिपति जा सकता है, दूसरा उसके स्थानपर आ सकता है। हर्षवर्द्धनमें इस साम्राज्यको सँभालने और उसे विस्तृत करके अपने वंशकी कीर्त्तिपताका फहरानेकी अधिक योग्यता है। उसके हाथोंमें आते ही इस राज्यकी सीमाएँ मालवा, कन्नौज और बंगालको आत्मसात् कर लेंगी। लेकिन यह तभी होगा, जब आप चिताका आलिङ्गन न करें।"

राज्यश्रीने कहा, "यदि तुम देशद्रोही नहीं हो तो मेरे सामनेसे हट जाओ, मेरी राह छोड़ दो। एक आर्यनारी अपने कर्त्तव्यको नहीं भूल सकती! पतिके सम्मुख संसारकी सम्पदाएँ उसके लिए तुच्छ हैं।"

कीर्त्तिसेनने सिर झुका लिया, "मैं आपको रोकनेमें भौतिक शक्तियोंका उपयोग नहीं करूँगा। किन्तु इतना अवश्य कहूँगा कि पतिके पार्थिव शरीरके साथ जल मरनेके स्थानपर उसके उद्देश्योंकी पूर्त्तिमें लगे रहना ही नारीका सच्चा धर्म है।"

"मैं इस विषयमें तुमसे उपदेश सुनना नहीं चाहती। तुम हमारे वंशके हत्यारे हो और अब भी तुमने हत्यापर कमर कस रखी है। राज्य-वर्द्धनमें तुमसे उलझने योग्य बल है। तुम मेरी राह छोड़ दो।"

"आप मेरी ओरसे स्वतन्त्र हैं, देवी ! आपकी इच्छापूर्तिमें अब कोई बाधक नहीं बन पायेगा," कहकर कीर्त्तिसेन मुड़ा और कक्षसे बाहर निकल गया।

सन्ध्या होते-न-होते शशाङ्क कन्नौजमें आ धमका। मालव-नरेश देवगुप्तके कपटी हृदयसे अपना दूषित हृदय मिलाकर वह महलोंके सामने आया। किन्तु वहाँ कीर्त्तिसेन अपने अङ्गरक्षकोंके साथ डटा खड़ा था। शशाङ्कने अश्व छोड़ते ही उसके कन्धोंपर हाथ रखकर कहा, "हम अपने उपसेनापतिको इस प्रथम विजयके अवसरपर बधाई देते हैं। कहाँ है हमारी मोहिनी ?"

कीर्त्तिसेनने तिरस्कारसे होंठ सिकोड़ लिये। "वह आपकी मोहिनी नहीं है, महाराज शशाङ्क ! आपने मुझे धोखेमें रखा। वह सच्ची आर्य नारी है और अपने पतिके अतिरिक्त अन्य किसी भी पुरुषका ध्यान करना उसके लिए सबसे बड़ा पाप है। मेरे रहते आप उसको छू भी नहीं सकते।"

शशाङ्कने उसके कन्धे परसे अपने हाथ हटा लिये। "यह कैसा विश्वासघात है ! हम तुमसे यह आशा नहीं करते थे। क्या हमारा आपसी समझौता तुम्हें स्मरण नहीं रहा ?"

"वह मुझे खूब अच्छी तरह स्मरण है," कीर्त्तिसेनने कहा, "किन्तु वह तभी पूरा हो सकता था, जब देवी राज्यश्रीकी इच्छा आपके साथ जानेकी होती। मैं आज तक यही समझता रहा कि देवी आपकी ओर आकर्षित हैं। उनसे बातें करनेपर यह धारणा मिथ्या सिद्ध हुई। अतः अब उनके सतीत्वकी रक्षा करना मेरा पहला कर्त्तव्य है, जिसे आप मेरे रहते पूरा नहीं कर सकते। वङ्गभूमिमें पहुँचकर आप इसके लिए मुझे दण्ड दे सकते हैं। यहाँ आपकी शक्ति तुच्छ है। इस समय वङ्ग-सेनाओंका मैं सेनापति हूँ।"

शशाङ्कने होंठ भींच लिये। पर वह विवश था। कुछ देर बाद वह

अपनी विमूढ़तासे निकलकर हँसा, "अच्छी बात है। हम तुम्हें अवश्य दण्ड देंगे। इस छोटी-सी बातके लिए हम तुम्हें एक इतना छोटा-सा दण्ड देंगे, जो हमारे उपसेनापतिके गौरवके पूर्ण अनुरूप होगा। राज्यवर्द्धनकी सेनाएँ कन्नौजकी सीमाएँ छू रही हैं। पहले हमें उसका स्वागत करना है!"

राज्यवर्द्धनसे सन्धि करनेके लिए शशाङ्क और मालव-नरेश दोनोंकी ओरसे एक राजदूत गया। तय हुआ कि तीनों राजाओंका एक सम्मिलित भोज होगा और उसीमें सब सन्धिकी शर्तोंपर विचार होगा। राज्यवर्द्धनने इस बातको मान लिया। जहाँ तीसरा राजा भी हो, वहाँ विश्वासघातकी सम्भावना नहीं थी। फिर साथमें अङ्गरक्षक रहेंगे। तीनों सेनाओंके मिलन-स्थलपर एक शिविरमें इस भोजका प्रबन्ध किया गया।

अगले दिन सुबहके समय इस शिविरमें राज्यवर्द्धनका स्वागत किया गया। कहना न होगा कि राज्यश्रीको इस समस्त कार्यवाहीसे अनजान ही रखा गया और महलपर इस बीच बड़ा पहरा रहा ताकि कोई व्यक्ति न भीतर जा सके, न बाहर आ सके।

जब भोज समाप्त हो गया और बातचीत आरम्भ होनेको हुई, तो सहसा ही कीर्तिसेन कमरमें खड्ग लटकाये, अपना कटा हुआ हाथ खोले अपने शत्रुके सामने जा खड़ा हुआ। अपने शत्रुको सम्बोधन करके वह बोला, "ओ वर्द्धन-साम्राज्य के कलङ्क, तुझे पहले मुझसे बातें करनी हैं। इस हाथको देख, इसे तूने काटकर यह समझा था कि तूने पृथ्वीसे शौर्यका नाम उठा दिया है। मैं तुझे अपने इस बायें हाथसे ही युद्ध करनेके लिए ललकारता हूँ। यदि तू कायर नहीं है और पराक्रमी प्रभाकर-वर्द्धनका पुत्र है, तो सामने आ।"

राज्यवर्द्धन एक लम्बे-चौड़े राज्यका अधीश्वर था। उसने हूणों, गुर्जरों और महासेन गुप्तसे लोहा लेकर उनके दाँत खट्टे किये थे। उसमें इतनी बात सुननेकी सामर्थ्य नहीं थी। उसने अपने अङ्गरक्षकसे खड्ग

लिया और आसनसे नीचे कूद गया। "मुझे अपनी भूल ज्ञात हो गई थी," उसने कहा। "किन्तु प्रतीत होता है, दैवने मेरे ही हाथों तेरी मृत्यु लिखी है।"

कीर्त्तिसेन ठहाका मारकर हँसा। "किसकी मृत्यु किसके हाथों लिखी है, यह तो निकट भविष्य बतायेगा। किन्तु यदि न युद्धमें मारा गया, तो अपने अङ्गरक्षकोंको कह दे कि चुपचाप सिर धुनते वापस लौट जायें। यदि मैं मारा गया, तो मैं भविष्यवाणी करता हूँ कि वङ्गभूमि और मालवा तेरे चरणोंपर लोटेंगे।"

राज्यवर्द्धनने अपने अङ्गरक्षकोंको इच्छित आदेश दिया और शिविरसे बाहर विस्तीर्ण मैदानमें दोनों शूरवीरोंका द्वन्द्वयुद्ध आरम्भ हुआ। कुछ ही देरके द्वन्द्वमें दर्शकोंपर प्रकट हो गया कि वर्द्धन-साम्राज्यके अधीश्वरसे जीतना वङ्गसेनापतिके लिए दुरूह है।

मगर कौन जानता था कि यह राज्यवर्द्धनको उत्तेजित करनेकी एक चाल थी। युद्धका अन्त आया समझकर उसने अनवरत प्रहार करने आरम्भ कर दिये और उसका आत्मरक्षाका पक्ष क्षीण पड़ गया। कीर्त्तिसेन इसी अवसरकी खोजमें था। नरपतिका वार बचाकर उसने अपने बायें हाथके एक ही प्रहारसे उसका सिर धड़से अलग कर दिया।

कीर्त्तिसेनका स्वप्न पूरा हुआ। राज्यवर्द्धनके अङ्गरक्षकोंके हाथ पहले ही बँध चुके थे। विस्मयान्वित हुआ राजवर्द्धनका सिर अभी तक फड़क रहा था। किसी प्रकारकी जयके नारे नहीं लगाये गये। तीनों सेनाओंके मिलन-स्थल पर उत्तेजना वर्जित थी। राज्यवर्द्धनके अङ्गरक्षक अपने स्वामीके विलग अङ्ग उठाकर वापस अपनी सेनाको लौट गये। सन्ध्या होते-होते वर्द्धनोंकी पूरी सेना शोकमें मग्न हो गई। सबकी भुजाएँ फड़क रही थीं, मगर उनका मूल प्रेरक नहीं था। तत्काल हर्षवर्द्धनके पास, थानेश्वरमें यह दुःखद समाचार भेजा गया।

इधर मालव-नरेशने कन्नौजकी किलेबन्दी की। कीर्तिसेनने राज्यश्रीकी

पाल्की सजवाई और शशाङ्कसहित उसने बंगालकी ओर कूच कर दिया। जाते-जाते कीर्तिसेनने अपनी वीरतासे प्रभावित मालव-नरेशसे क्या वचन लिया यह शशाङ्क न जान सका।

कीर्त्तिसेनके सेनापतित्वमें भेजा हुआ यह अग्रिम दल शीघ्र ही शशाङ्कके अधीन बंगालके शेष शक्तिसे जा मिला, जिसकी सेनाओंने कन्नौजसे काफ़ी बचकर अपने पड़ाव डाल रखे थे। वहाँ पहुँचते ही शशाङ्कने सेनाओंको सज्जित होनेकी आज्ञा दी और अपने सेनापतिकी हर हालतमें रक्षा करनेकी शपथ खाये हुए उसके अङ्गरक्षक-दस्तेसे अलग हट जानेको कहा। किन्तु वीर योद्धाओंने उसकी आज्ञा माननेसे इनकार कर दिया। इसी बीच कीर्त्तिसेन आगे आ गया।

"महाराज शशाङ्क," कीर्त्तिसेनने कहा, "आपके प्रति ये लोग नहीं, मैं उत्तरदायी हूँ। मैं जानता था कि निराश प्रेमी कहाँ चलकर चुटीले साँपकी तरह अपना डक मारेगा। मेरी साध पूरी हो गई है। मैं दण्डके लिए अपनेको आपके सामने प्रस्तुत करता हूँ।"

शशाङ्कने कहा, "उँह! हम वीरताका सम्मान करनेवाले नरपति हैं। हम ऐसे वीरको पृथ्वीसे उठाना नहीं चाहेंगे, जो अपनी समानता नहीं रखता। हमारा पुरस्कार हमारे सामने है। हमारा रास्ता छोड़ दो। हमारी नजर उस पालकीपर है।" और उत्तरकी प्रतीक्षा किये बिना ही राजा शशाङ्कका अश्व उछलता हुआ पालकीके सम्मुख पहुँच गया, जहाँ पालकीके वाहक इस काण्डको देखकर सहमे हुए-से खड़े थे।

पालकीके पास पहुँचते ही शशाङ्क चिल्लाया, "पालकीका आवरण हटा दो!"

कहारोंने हड़बड़ाकर उसकी आज्ञाका पालन किया।

किन्तु यह क्या! पालकी खाली थी! राज्यश्रीके स्थानपर वहाँ कुछ बड़े-बड़े पत्थर रखे थे। शशाङ्कका चेहरा देखते-देखते अग्निका पुञ्ज बन गया। उसके नेत्र क्रोधके अतिरेकसे फैल गये। वह तुरन्त घोड़ा कुदाता

हुआ वापस लौटा और उसने अपने सैनिकोंको आज्ञा दी, "इस विश्वास-घातीको पकड़ लो! हम इसे ऐसी सजा देंगे कि यह भी याद रखेगा।"

युवक कीर्त्तिसेनके मुँहपर एक अपूर्व तेज था। "वङ्गपति, सजा पानेके लिए ही मैं यहाँ तक आया हूँ। संसार ही इस तथ्यको पहचानेगा कि मैं विश्वासघाती हूँ; देशद्रोही हूँ, या कीर्त्तिसेन हूँ। देवी राज्यश्रीका ध्यान मनसे हटा दीजिये। वह महासती है, और इस समय मालव-नरेशके प्रकल्पमें अपने पतिके मृत शरीरके साथ चिताकी ज्वालाओंका आलिङ्गन कर रही होगी। उसके लिए वह आलिङ्गन आपके शरीर-स्पर्शसे कहीं अधिक सुखदायी होगा।"

"ओह!" शशाङ्क क्रोधसे दाँत किचकिचाता हुआ चिल्लाया, "इसे सामनेके पेड़से बाँध दो!" उसने अपने सैनिकोंको आज्ञा दी।

सैनिकोंने अपने सेनापतिकी आज्ञाका पालन किया।

कीर्त्तिसेनकी यही स्थिति थी, जब हर्षके अधीन उसके भाई जयकीर्त्तिके नेतृत्वमें वर्द्धनोंकी विशाल सेनाएँ, कन्नौजमें मालव-नरेशका मानमर्दन करती हुई, राज्यश्रीको चितारोहणसे रोककर कन्नौजकी विधवा महारानीके पदपर प्रतिष्ठित करती हुई, शशाङ्कका मस्तक नवानेके लिए बङ्गालके पथपर बढ़ी चली आ रही थीं। शशाङ्क कभीका वहाँसे पलायन कर चुका था। उन सेनाओंका स्वागत करनेके लिए रह गया था केवल एक निःसहाय युवक, वृक्षसे बँधा हुआ, दो दिनका भूखा-प्यासा, मैला कुचैला, शारीरिक प्रवृत्तियोंकी यातनाओंसे त्रस्त, किन्तु जिसके प्रतिशोधकी आग अब उसे नहीं जला रही थी।

हर्षका हाथी सामने इस विचित्र दृश्यको देखकर ठिठका। तत्काल सेनापति जयकीर्त्ति आगे आया और जब उसने छातीकी ओर झुका हुआ उस युवकका सिर ऊपर उठाया, तो एकबारगी उसकी आँखें छलछला आईं। उसने पुकारा, "कौन, कीर्त्तिसेन!"

क्षीणस्वरमें कीर्त्तिसेनने कहा, "हाँ।"

बस, स्नेहकी प्रवृत्तियोंने यहीं तक काम किया। देखते-देखते जयकीर्त्ति का स्वाभिमान अंगड़ाई लेकर उठ खड़ा हुआ और वह चिल्लाया, "रे नीच, तूने मेरी माँकी कोखसे क्यों जन्म लिया। क्या तेरे जैसे साँपको रहनेके लिए कोई और बाँबी नहीं मिली थी? रे देशद्रोही, क्यों तू अभी-तक पृथ्वीके ऊपर अपना भार डाले उसे दहला रहा है!"

युवकके मुँहपर क्षीण और उदासीन मुसकराहट आई। उसने उत्तरमें कहा, "इन सब प्रश्नोंका एक ही उत्तर है। मैं अभीतक अपने उस भाई की कीर्त्तिको देखनेके लिए जी रहा हूँ, जिसने उसी माँकी कोखको पवित्र किया था, जिससे मेरा जन्म हुआ था।"

"क्या तू मुझे अपना भाई कहता है?" जयकीर्त्तिने आँखे तरेरकर कहा, "तेरी ज़बान नहीं कटकर गिर पड़ती!"

जयकीर्त्तिने तत्काल अपने आदमियोंको सङ्केत किया और उन्होंने कीर्त्तिसेनको वृक्षसे खोल दिया। एक पूरी चादरमें लिपटे उसके शरीरसे ऐसा लगता था मानो प्रेतात्मा प्रेत-लोक छोड़कर दिनमें ही भूपर उतर आई हो। बड़ी कठिनाईसे उसने खड़े रहने योग्य शक्ति एकत्र की।

जयकीर्त्तिने कहा, "सुना है तूने अपने बायें हाथसे ही धराको कम्पित-कर रखा है? सुना है तूने बड़े-बड़े अधीश्वरोंके सिर इसी कलङ्कित हाथसे काट डाले हैं! ले यह खड्ग, आज भाईका सिर भी काट!" उसने खड्ग उसकी ओर फेंकी, जो आधार न पाकर कीर्त्तिसेनके क़दमोंमें जा गिरी। जयकीर्त्तिने कहा, "क्यों, खड्ग उठाते भी लज्जा आती है! उस समय लज्जा नहीं आई, जब तूने थानेश्वरको अनाथ किया था, जब तूने महा-देवीको पतिविहीन किया था, जब तूने अपने दूषित पग शत्रुके दरबारमें रखे थे? अब क्यों लज्जा करता है? उठा खड्ग, मैं भी रास्तेका हारा-थका हूँ और तू भी शायद भूखा सिंह है...उठा, नहीं तो भगवानकी सौगन्ध खाकर कहता हूँ कि तेरा सिर इस खड्गसे अलग कर दूँगा।"

कीर्त्तिसेन अब भी एक फीकी हँसी हँसकर रहा गया। उसने कहा, "भैया, तुम्हें उत्तर देकर अब मैं और अधिक दुःखी नहीं करना चाहता। अब मैं तुमसे किस लिए लड़ूँ ? मेरा उद्देश्य पूरा हो गया है। मेरे स्वाभिमानके साधन समाप्त हो गये हैं, इसलिए तुम जो जीमें आये कहकर अपने ऊपरसे मेरा कलङ्क धो सकते हो। अब मुझे जीनेकी रंचमात्र भी साध नहीं रह गई है, इसलिए तुम मेरा सिर काट सकते हो। किस भाईको इतना बड़ा सौभाग्य मिल सकता है कि मरते समय उसका सिर अपने बड़े भाईके कदमोंमें लोटता हो।"

जयकीर्त्तिपर इन बातोंका कोई असर नहीं हुआ। उसने उसी आवेशमें कहा, "रे अधम, मैं जानता हूँ कि तूने तक्षशिलामें खूब साहित्य घोटा है। तू पत्थरको पानी बना देने वाले वाक्योंकी रचना कर सकता है। अच्छी बात है, यदि तू अपने उस पापी हाथको भी प्रयोग नहीं करना चाहता, तो यह ले", और उसने अपना खड्ग उठाकर एक ही प्रहारमें कीर्त्तिसेनका सिर उसके धड़से अलग कर दिया।

कटे हुए उस सिरके मुँहपर अभी तक झीनी मुसकराहट थी। मालूम नहीं उसमें जीवनका कौन-सा दर्शन छिपा था। किन्तु सम्भवतः अपनी अन्तिम इच्छाके कारण ही वह बड़े भाईके कदमोंमें जाकर गिरा। उसके धड़की चादर जहाँ-तहाँसे उधड़ गई, और उस समय हर्षवर्द्धनके साथ जयकीर्त्ति तथा अन्य महावीरोंने देखा कि उस सिरसे हीन धड़से दायें हाथके साथ-साथ बायाँ हाथ भी कटा हुआ था।



• प्राणोंका मूल्य

प्राण संसारमें सबसे महँगी वस्तु समझी जाती है, क्योंकि यही एक ऐसी वस्तु है, जिसे मनुष्य सब कुछ खोकर भी देना नहीं चाहता किन्तु मनुष्य मनुष्यताके प्रारम्भसे ही कुशल व्यापारी भी रहा है। उसके पास कोई ऐसी वस्तु नहीं, जो बेची न जा सके। इसलिए समय-समयपर उसने प्राणोंको भी बेचा। समय-समयपर प्राणोंका मूल्य भी भिन्न-भिन्न रहा है, और ऐसा भी समय भारतीय इतिहासमें आया है, जब भारतीयोंने यह अनमोल वस्तु बुझी संस्कृतिकी अर्थीपर खुले हाथोंसे बिखरा दी। यह कहानी ऐसे ही एक समयकी है।

मेवाड़पतिके महाराणा प्रतापका भाई शक्तसिंह सतरह पुत्रोंका पिता था। ये सतरहके-सतरह बेटे प्राणोंके व्यापारी थे। अपने पिताके नामपर इनके वंशका नाम शक्तावत पड़ा। जब शक्तसिंहकी मृत्यु हो गई, तो सबसे बड़े पुत्र भांजीको छोड़कर शेष सोलह पुत्र पिताके शवको श्मशान तक ले जानेके लिए भैंसरोरके किलेसे निकले। अन्त्येष्टि-क्रिया सम्पन्न हो जानेपर जब वे वापस लौटे, तो उन्होंने देखा कि किलेके फाटक बन्द हैं और फसील पर मोर्चाबन्दी है। मेहराबके ऊपर भांजी दोनों हाथ कूल्हों पर रखे तना हुआ खड़ा था। जब शक्तावतोंमें से एक भाई बालोने पुकार कर कहा, "भांजी, यह क्या बात है? फाटक कैसे बन्द हैं?" तो भांजीने उत्तर दिया, "जब एक म्यानमें दो तलवारें नहीं रह सकतीं, तो सतरह कैसे रह सकती हैं! भैंसरोरके किलेमें केवल एक ही तलवार समा सकती है।"

दूसरे भाई जोधाने चिल्लाकर कहा, "निकालना था, तो लड़कर निकालते, भाइयोंको धोखा देते लज्जा नहीं आई!"

उतने ही तीव्र स्वरमें भांजीने उत्तर दिया, "वे भाई और होते हैं, जो भाइयोंसे लड़ते हैं; तुम सबमें जिसकी इच्छा हो मेरी जगह आ जावे। मैं तुम सोलहके साथ मिल जाऊँगा। मगर मैंसरोरमें एक ही भाई रहेगा। हम सब शक्तावत हैं, एक-एक भाईमें एक-एक किलेको सर करनेकी शक्ति है। घरसे बाहर निकलकर देखो संसार कितना बड़ा है, और उसमें इतना यश है कि सारी उमर मेहनत करके बटोरा नहीं जा सकता। तुम सब उसे मिलकर बटोरो, नहीं तो कहो, मैं तुम्हारे साथ चलता हूँ। लेकिन मैंसरोरमें केवल एक शक्तावत रहेगा।"

सोलहके-सोलह भाई एक दूसरेके मुँहकी ओर ताकने लगे। कौन कायर बनकर भांजीकी जगह जाये! बहुत देरके वाद-विवादके बाद निश्चय हुआ कि भांजी ही शायद ठीक कहता है। बालेने कहा, "अच्छा, हम यश ही बटोरेंगे, और इतना बटोरकर मरेंगे कि तुमसे जीते जी बचेगा नहीं। हमारे घोड़े और हथियार भिजवा दें।"

भांजीने हँसकर कहा, "बहुत अच्छा, तुम यश लाभ करो और मैं सुन-सुनकर मोटा होता रहूँगा। तुम्हारे घोड़े और हथियार पहलेसे ही पहाड़ीके नीचेवाले एक पेड़से बँधे हैं।"

सोलह भाइयोंने जन्मभूमिकी मिट्टी माथेसे लगाई और आँखोंमें उसके प्यारका जल लिये पीठ मोड़कर चल दिये। पहाड़ीके नीचे पहुँचने पर उन्हें वाञ्छित सामान मिल गया और उन्होंने संसारकी विस्तृत राह पर अपने घोड़े छोड़ दिये।

ईडरके राजाने इन मतवालोंको अपने यहाँ शरण दी। ईडरके सङ्कुचित क्षेत्रमें उन्होंने कुछ दिनों तक आनेवाली परीक्षाके लिए अपने बदन माँजे, हथियार पैने किये और उन्हें अपने हाथोंसे सधाया। आखिर वह समय भी आ गया, जो हर आदमीके जीवनमें एक-न-एक बार आता है। अवसर पहचाननेवालोंने उस समयको पकड़ा।

महाराणा प्रतापका पुत्र अमरसिंह मुगलोंसे लड़ते हुए अभी तक अपने

देशके गौरवकी रक्षा कर रहा था। [illegible] खज़ाना अभी तक समाप्त नहीं हुआ था। जब राणा अमरसिंहको यह मालूम हुआ कि उसके सोलह चचेरे भाई ईडरमें टिके हुए हैं, तो उसने उन लोगोंके लिए सॉडनी भेजी। साथमें एक पत्री भेजी : "...राजपूतोंका गौरव अभी तलवारकी नोक पर टँगा है। तलवारें नीची न करो, अभी माँ को उनकी जरूरत है। मेवाड़के राणाकी बाँहें तुम्हें छातीसे लगा लेनेके लिए तड़प रही हैं...'

सोलह भाइयोंने उसी समय घोड़े कस लिये। जब घोड़े सज गये, तो बालोने कहा, "भाइयो, तलवारें ऊँची और नजरें नीची कर लो। भाजी हाथ मल-मलकर रो न दिया, तो बालो नाम नहीं...।"

वायुवेगसे सोलह भाई महाराणा अमरसिंहकी बाँहोंमें जा सिमटे। मेवाड़को एक अपूर्व शक्ति मिली—शत्रुओंके कलेजे दहल गये, चिरकालसे बिछुड़े हुए एक ही रक्तके दो अणु जैसे एक-दूसरेसे आकर्षित होकर आपसमें लुढ़कते-पुढ़कते मिल गये हों।

मगर समय बीतते-न-बीतते राजपूत सैनिकोंको यह शीघ्र ही पता चल गया कि इन सोलह भाइयोंमें राजकुमारों-जैसी कोई बात ही नहीं थी। डेरे गाड़नेसे लेकर पानी खींचने तकके काममें एक-न-एक शक्तावत दिखाई पड़ता था। शायद ही कोई सैनिक बचा हो, जिसे शक्तावतके हाथका परोसा भोजन न मिला हो। शायद ही कोई घोड़ा ऐसा हो, जिसके मुँह पर किसी शक्तावतका हाथ न फिरा हो। शायद ही कोई सरदार ऐसा हो, जिसने बालोके शारीरिक बलके करतब न देखे हों। आदमी क्या था देव था—पाँच मन पक्केका वज़न दोनों हाथोंसे मेमनेकी तरह उठा लेता था।

कुछ ही दिनोंमें सोलह शक्तावतोंने राणा अमरसिंहका मन मोह लिया। अन्य भी कितने सरदारोंका मान उनकी दृष्टिमें ऊँचा था, और

उनमें चूड़ावत सरदारका रुतबा सबसे ऊँचा था। राणाकी सेनाके अग्र-दलका नेतृत्व चूड़ावत सरदारके हाथमें ही था। यह मान परम्परासे उनके वंशमें चला आता था। एक दिन अकारण ही बालोंसे इन चूड़ावत सरदारकी भिड़न्त हो गई।

बात कुछ भी नहीं थी। सेनाके उपयोगके लिए लकड़ियाँ बनानेको पेड़ गिराये जा रहे थे। बड़े-बड़े आरे लगे हुए थे। अचानक कुछ मन-चले नौजवानोंमें ठहर गई कि एक मोटेताजे पेड़को बिना आरेसे चीरे ही गिरा दिया जाये। पेड़में रस्से बाँध दिये गये और जवान उस रस्सेपर जूझ गये। काम सालुम्बराके सरदार चूड़ावतकी देख-रेखमें हो रहा था। वह शानके साथ मूँछोंकी नोकोंको मरोड़कर ऊपर करनेकी चेष्टा करते हुए यह तमाशा देख रहे थे। उसी समय उधरसे बालोंका गुज़र हुआ। उसने एक नजर पेड़पर डाली, एक उसे गिरानेके प्रयत्नमें रत जवानोंपर और एक चूड़ावत सरदार पर। उसने पास आकर चूड़ावत सरदारसे हँसते हुए कहा : "सरदार साहब, मूछोंकी नोक इस तरह मरोड़नेसे ऊँची नहीं होगी इनपर पसीनेका छुआव लगाइये।"

सरदार चूड़ावतने आँखें तरेरकर नौजवान बालोंकी तरफ़ देखा। तबतक बालो रस्सेके साथ जूझ गया। छातीमें साँसभर, उसने रस्सेको अपनी कमरके चारों तरफ़ लपेट लिया और जवानोंने पीछेकी ओर जोर किया। कुछ देर तक मालूम दिया कि पेड़ इस समस्त संघर्षको व्यर्थ करके ज्यों-का-त्यों आकाशमें सिर ऊँचा उठाये खड़ा रहेगा। अनजाने ही चूड़ावत सरदारके होठोंपर एक व्यङ्गपूर्ण मुसकान खेल गई। किन्तु उसी समय सहसा भारी आवाजके साथ पेड़का तना चरमराया और देखते ही देखते उसका विशाल शरीर मानव-शक्तिका सम्मान करनेके लिए भूमिपर दण्डवत् लेट गया।

बालोंने देरसे रोकी हुई साँस छोड़ी, जैसे अजगरने फुङ्कार मारी हो! पैर सीधे करके वह तनकर खड़ा हुआ। पुष्ट गरदनको घुमाकर उसने

चूडावत सरदारकी ओर मुँह किया। उसके मुँह और शरीरपर उभरे बड़े-बड़े स्वेदकणोंके कलेवर सूर्यकी किरणोंको चूमकर तड़प गये। उसके होठों पर भी एक मुसकान हौलेसे उभरी। चूडावत सरदारने इस मुसकानमें व्यंग्यका अनुभव किया। उन्होंने कहा, "बालोजी, इतना ही जोर रणमें दिखाओ तो तुर्क एक दिनमें भारतकी सीमाके बाहर हो जायें..."

उँगलीसे माथेका चुहचुहाता हुआ पसीना समेटकर भूमिपर गिराते हुए बालोंने उत्तर दिया, "जिस दिन नेतृत्व जवानोंके हाथमें आयगा, उस दिन दुश्मन भारतसे ही नहीं, धरासे उठ जायगा।"

चूडावत सरदारने अपनी लम्बी और सफेद मूँछोंको दाँतोंमें नोचा। जी चाहा कि तलवारसे उसका सिर धड़से अलग कर दे। उनके वंशके एकमात्र अधिकारको चुनौती देनेवाला बालो निमिषमात्रमें उनकी आँखोंके खूनमें उतर गया। यही सरदार चूडावत थे, जिन्होंने युद्धके भयसे पीछे क़दम हटाते हुए राणा अमरसिंहकी विलास-क्रीडाके प्रतीक, एक आदमकद शीशेको फरशाका पत्थर मारकर चूर-चूर कर डाला था और राणाको घिघियाते बच्चेकी तरह कमरसे उठाकर घोड़ेकी पीठपर सवार करा दिया था। जिस महावीरने मेवाड़के राणाकी अक्ल ठिकाने लगा दी थी, उसीके गौरव और अधिकारको आज एक शक्तावत ललकार रहा था!

चूडावत सरदारने कहा, "बालो जी, तुँहमें ज़बान है, तो इसके अर्थ ये नहीं कि दाँतोंकी पहरेदारी जाती रहे। राणाके सम्मुख तुम्हें अपनी उच्छृङ्खलताके लिए उत्तरदायी होना पड़ेगा।"

और बालो केवल हँसकर रह गया। उसकी चौड़ी छातीने शान्तिके साथ साँस लेना आरम्भ कर दिया।

दिन बीता और रात आ गई। डेरोंके बाहर सैनिकोंने आग जलाई और भोजनके लिए बाजरा पकना आरम्भ हो गया। राणा अमरसिंहने डेरेसे कुछ दूरीपर दरबार जोड़ा और सभी प्रमुख सामन्त चारों ओर

यथासम्मान आसीन हो गये। बीचोंबीच लकड़ियोंका एक बड़ा अम्बार लगाकर आग जलाई गई और जाड़ेसे सुरक्षित होकर सरदारोंने आगे युद्धकी योजनाके लिए अपने-अपने विचार रखने आरम्भ कर दिये।

मुगलोंकी सीमापर पड़नेवाले सबमें पहले किले ऊनतालकी दृढ़ दीवारोंको भेदनेका प्रश्न उठा। राणाने चारों ओर निगाह पसारकर कहा, "सरदार चूडावत दिखाई नहीं देते, क्या बात है?"

उसी समय एक शक्तावतने आकर लकड़ियोंका एक गट्ठर बीचमें जलते हुए आगके टीले पर डाल दिया। भभकती हुई आगमें शक्तावतका मुँह जैसे लाल आभासे प्रदीप्त हो उठा। राणाने श्रमके पुतले बालोको एक क्षण प्रशंसाकी दृष्टिसे निहारा और फिर बोले, "बालोजी, अब तो थक गये होंगे। छोड़ दो अब कामको।"

बालोने मुखर होकर उत्तर दिया, "राणाजीने अभी शक्तावतोंकी शक्ति नहीं देखी, इसीलिए ऐसा कहते हैं। जिस छातीपर हाथी भी गुजर जाये, तो साँस न छूटे, उसमें थकानका अनुभव कैसे हो सकता है?"

इस गर्वोक्तिपर सरदार लोग चौंके। यह तो प्रकट था कि बालोमें अपूर्व बल था, मगर हाथीमें भी कुछ वजन होता है। राणाने हँसकर कहा, "हमारे सरदारोंमें प्रथा है कि जो ज़बानसे निकल जाये उसे पूरा करके दिखाते हैं। जो किया नहीं जा सकता उसकी डींग मारना वीरोंके लिए शोभाजनक नहीं होता, बालोजी।"

इतनी-सी बातपर बालो तनकर खड़ा हो गया। "मैं इसी समय, सब सामन्तोंके सामने जो मैंने कहा है वह पूरा करके दिखाऊँगा। हाथी मँगाया जाय।"

बालोकी गर्वोक्ति सुनकर एक बार तो सभी सनाका-सा खा गये। पलक मारते वह सैनिक-राजसभा खेलका अखाड़ा बन गई। राणा अमर-सिंहने उसी समय अपना खास हाथी मँगवाया। यह हाथी जहाँ बहुत

अधिक बलवान् था वहाँ अत्यन्त आज्ञाकारी भी था । राणाको विश्वास था कि यदि अदूरदर्शितासे बालो हाथीके पैरोंतले कुचलने भी लगा, तो वह उसी क्षण हाथीको आज्ञा देकर अपना पग पीछे हटानेके लिए मजबूर कर सकते थे ।

दूर-दूर तक पड़ी राजपूत छावनीमें यह समाचार पहुँच गया । दो घड़ीके भीतर-भीतर सारा जङ्गल इस अद्भुत खेलके दर्शकोंसे भर गया । बालो प्रसन्न था ! उसने डेरेमें रहकर समय व्यर्थ नहीं खोया था । अन्तमें जब खेलकी तैयारी पूरी हो गई तो राणाने फिर निगाहें पसारकर देखा । चूड़ावत सरदार कहीं भी दिखाई नहीं पड़ रहे थे । उन्होंने उसी समय अपने अङ्गरक्षकको उन्हें डेरेसे बुला लानेके लिए भेजा । कहलवाया कि ऐसा अद्भुत खेल उन्होंने सारे जीवन नहीं देखा होगा ।

कुछ देरमें सन्देशवाहक चूड़ावत सरदारका उत्तर लाया : "राणाजीका निमन्त्रण सिर आँखोंपर, मगर चूड़ावत वंशके वीर कभी इस तरहके बचकाना खेलोंमें रस नहीं लेते । उनका मनोरञ्जन रणस्थलोंके अतिरिक्त और कहीं नहीं होता..."

राणा अमरसिंहके मनको आघात लगा । कोई किसीकी गर्दन पकड़कर सही रास्तेपर भले ही लगा दे, मगर जिसकी गर्दन पकड़ी जाती है वह एकबार उसे हाथोंसे सहलाता ज़रूर है, एकबार अपने उद्दण्ड शुभचिन्तककी ओर रोषभरी दृष्टिसे देखता ज़रूर है । चूड़ावत सरदारकी पहली उद्दण्डताका कोई बीज अभीतक राणा अमरसिंहके मनमें कहीं छितरा हुआ था । यह दूसरी बार उसमें खाद पड़ी, और वह खूनका घूँट पाकर रह गये । जो व्यक्ति इस वीरतापूर्ण अद्भुत प्रदर्शनमें रस ले रहे थे, चूड़ावत सरदारने उन सभीको बच्चोंकी श्रेणीमें डाल दिया था ।

जब तक राणा इन विचारोंमें डूबते-उतराते रहे, तब तक खेलका आरम्भ भी हो गया और वह हाथीके द्वारा पहुँच सकनेवाली हानिके प्रति सचेत नहीं रह सके । सहसा द्वेष-निद्रासे चौंककर उन्होंने देखा कि

बीच मैदानमें, छाती पर लकड़ीके तख्ते रखे, बालो साँस फुलाये पड़ा है और सधा हुआ हाथी एक क्षणके लिए अपने चारों पैर तख्तेपर रख-कर उतर चुका है। हाथीके अलग हटते ही शक्तावत भाई बालोकी ओर दौड़े। साथ ही दौड़े सब सरदार, अपने-अपने हृदयमें आशङ्का छिपाये—शायद इस वीरकी कुचली हुई लाश ही देखनेको मिले!

मगर बालो धौंकनीकी तरह साँस छोड़ता हुआ उछलकर खड़ा हो गया। शक्तावतोंने भाईको कन्धोंपर उठा लिया और सामन्त-सरदारोंने उसकी पीठ ठोंकी। जब शक्तावत बालोको कन्धोंपर उठाये राणा अमरसिंहके सामने लाये तो वह नीचे कूद पड़ा और राणाने उसे अपने वक्षसे लगा लिया। फिर उल्लासपूर्ण स्वरमें बोले, "तुमने अपनी मेहनत और बलसे यहाँ उपस्थित सभी सरदारोंका मन मोह लिया है। हम नहीं समझ पा रहे हैं कि हम तुम्हें पुरस्कारमें क्या दें—फिर भी, हमारी सेना-ओंके अग्रदलका नेतृत्व अबसे शक्तावतोंके हाथमें रहेगा।"

राणाके इस असामयिक पुरस्कार-दानको सभी उपस्थित जनोंने सुना और दाँतोंमें उँगली दबा ली। जिस अधिकारपर आज तक चूड़ावतोंके वंशका आधिपत्य था वह अकारण ही निमिषमात्रमें उससे छिन गया था। इस अधिकार-हननका रौद्र रूप भविष्यमें क्या होगा इसकी कल्पना न कर पानेके कारण सरदारोंके हृदय आशङ्कासे काँप गये। क्या चूड़ावत-सरदार इस अपमानको इतने ही सहज भावसे पी जायेंगे?

मगर शक्तावतोंके डेरेमें घीके चिराग जले। जो सम्मान उन्हें मिला था वह अकल्पनीय था—फिर चाहे वह किसीके भी अधिकार-क्षेत्रसे नोचकर दिया गया हो। आज वे उस दिनको सराह रहे थे, जिस दिन भाईने धोखा करके उन्हें भैंसरोरके बन्द फाटक दिखाये थे। वे यश खोजनेके लिए निकले थे और उन्हें यश मिला था।

इस समाचारको चूड़ावत-सरदारके पास वह व्यक्ति लेकर गया, जो उसे सबसे अधिक उत्तेजक ढंगसे सुना सकता था। वह था चूड़ावत

सरदारका भाट। उसने गीतोंमें चूड़ावत वंशके उन कृत्योंका उद्बोधन किया, जिन्हें सुनकर चूड़ावतोंकी ही नहीं, साधारण राजपूतोंकी बाहुएँ भी फड़क उठती थीं। गौने आई पत्नीने एक समय अपने हाथों अपना सिर काटकर मोहसे ग्रस्त पतिके पास भिजवाया था: "जाओ, अब निश्शङ्क होकर लड़ो। तुम्हारी मोह-मूर्ति तुम्हारे पास रहेगी।" और चूड़ावतने रानीका सिर अपने गलेमें बाँध लिया था। उसके हाथोंमें रणचण्डी उतर आई थी और आँखोंमें साक्षात् अग्नि फूट निकली थी...कहाँ गये वे समय? कहाँ हैं वे वीर? कहाँ हैं वे...।

तड़पकर चूड़ावत-सरदार बाहर निकले। "बन्द करो यह गाना! क्या तुम किसीको शान्तिसे बैठने नहीं दोगे! क्यों पागल आदमीकी तरह चिल्ला रहे हो?"

भाटने सिर झुका दिया। "चुप ही रहूँ, राणावतजी, अब आखिरी बार इस गीतको गा रहा हूँ। फिर नहीं गाऊँगा। कलसे केसरिया ध्वज शक्तावतोंके हाथमें जा ही रहा है।"

"क्या बकते हो!" चूड़ावत-सरदार गरजे। "जानते नहीं किससे बातें कर रहे हो!"

"जानता हूँ, राणावतजी..." और उसने बीते हुए काण्डको अक्षर-अक्षर जोड़कर इस तरह कहना आरम्भ किया, इस तरह दुहराया कि यदि स्वयं चूड़ावत सरदार भी वहाँ उपस्थित होते, तो इस प्रकार नहीं देख सकते थे। भाटके बोल ज्यों-ज्यों उसके कानोंमें पड़ते गये त्यों-त्यों मानो ढला हुआ सीसा उनमें ढलता रहा। झपटकर उन्होंने म्यानसे तलवार खींची और राणा अमरसिंहके डेरेकी ओर चल पड़े, जहाँ शक्तावतों सहित सामन्तगण फिरसे ऊनतालके किलेको सर करने की योजना बना रहे थे।

समस्त सरदारोंकी निगाह एक साथ ही द्वारकी ओर उठ गई, और सबके नेत्र आश्चर्यसे फटे रह गये। चूड़ावत सरदार हाथमें नंगी तलवार

लिये उपस्थित जनोंपर नेत्रोंसे आग बरसा रहे थे । सरदारोंको सम्बोधित होते देखकर उन्होंने गरजकर कहा, "कौन माईका लाल है, जो चूड़ावतोंके हाथसे केसरिया पताका लेगा—शेरनीका दूध पिया हो, तो सामने आये !"

बालो उछलकर खड़ा हो गया । जोधाने तलवार फेंकी और वह बालोके हाथमें जादूके मन्त्रकी तरह आ गई । क्षणमात्रमें सभी सामन्त उठ खड़े हुए । बाहर प्रज्वलित अग्निका प्रकाश डेरेकी विशाल दीवारोंपर छायाके साथ आँखमिचौनी खेलने लगा ।

निकट ही था कि बिजलियाँ कौंध जातीं कि राणा अमरसिंह बीचमें आ गये । ललकारकर उन्होंने चूड़ावत-सरदारसे कहा, "रावतजी, तलवार ही लेकर आये हो, तो उड़ा दो हमारा सिर । चूड़ावतोंके हाथसे यही काम होना बाकी रह गया है !"

चूड़ावत-सरदारने अपमानको पीकर कहा, "आप ही इस काण्डके उत्तरदायी हैं—आप बीचमेंसे हट जाइये, राणाजी !"

"ठीक है," राणाने कहा, "हम उत्तरदायी हैं, तो हम ही उत्तर देंगे । नेतृत्व परम्पराकी बपौती नहीं है, नवीनताका अनुगामी है । बाप्पा-रावलके गौरवको बने रहना है, तो नेतृत्व वृद्ध हाथोंसे जवान हाथोंमें देना ही होगा । तलवारको म्यानमें करके जवाब दो, नहीं तो हमारी नज़रोंसे दूर हो जाओ । हमें उद्दण्ड सरदारोंको सहनेकी आदत नहीं है ।"

चूड़ावत-सरदारको अब अपनी स्थितिका भान हुआ । उन्होंने राणा और सरदारोंके दृढ मुखोंकी ओर देखा और शान्तिके साथ तलवारको कमरपेटीमें खोंस लिया । फिर बोले, "आयु ही वीरताका प्रमाण नहीं होती, राणाजी, मेरे वंशका परम्परागत अधिकार मुझसे छीननेसे पहले आपको नवीन शक्तिकी श्रेष्ठता प्रमाणित करनी थी । हाथीको छाती-परसे गुज़ार देना एक बात है और तुर्कोंकी अक्षौहिणी सेनाको गुज़ारना

बिल्कुल दूसरा बच्चा। खेल वीरताके मापदण्ड कभी नहीं बन सकते।

इस मारकाटके आयोजनमें एक न एक दिन अन्य सरदारोंको भी अपने परम्परागत अधिकार छिननेका भय हुआ। इसलिए सभी एक स्वरसे बोल उठे, "राणावतजी ठीक कहते हैं।"

शक्तावतोंने आशङ्कासे राणा अमरसिंहके चेहरेको देखा। देखें अब राणा अपना दिया हुआ पुरस्कार किस प्रकार वापस लेते हैं! राणाने कुछ क्षण विचार करके कहा, "अच्छी बात है, परीक्षा ही प्रमाण होगी। चूडावतों और शक्तावतोंमेंसे जो सबसे पहले ऊनतालके क़िलेमें प्रवेश करेगा वही वंशानुक्रमसे केसरिया ध्वजका रक्षक रहेगा।"

सरदारोंने महाराणा प्रताप और महाराणा अमरसिंहके नामका जयघोष किया। जब यह कलरव धीमा पड़ा, तो सबने देखा कि वहाँ डेरेमें न चूडावत सरदार थे और न शक्तावतोंमेंसे कोई था। वे जल्दीसे-जल्दी अपनी-अपनी सेनाओं सहित ऊनतालके क़िले तक पहुँचनेके लिए विदा हो चुके थे। रात्रिके समय ही राजपूती शिविरोंमें रणभेरी बज उठी। चारों दिशाओंमें वनप्रदेश जैसे सिंहकी ललकारोंसे गूँज उठा।

शक्तावतोंने अपने हाथियों सहित कभीका कूच बोल दिया था। शत्रुको गुमान भी नहीं हो सकता था कि सीमापर हमला करनेमें दुश्मन इतनी अकल्पनीय शीघ्रता करेगा। बालो और जोधाकी योजना थी कि ऊनतालके रक्षकोंको बेखबरीमें धर दबोचा जायेगा, और यदि वे समय रहते खबरदार हो गये, तो मुख्य द्वारपर हाथी हूल दिये जायेंगे। इस महाप्रयाणके पथपर कौन गिरेगा, कौन बढ़ेगा, इसकी चिन्ता न किसीको थी, न होने वाली थी।

चूडावतोंने अपने घोड़ोंपर भरोसा किया। ऊनतालको पीछेकी ओरसे दपना ही उनका उद्देश्य था। अपनी घुड़सवार सेनाके साथ शक्तावतोंसे पहले ही पहुँचकर वे शत्रुको चकित कर सकते थे। साथमें पाँच सौ भील

धनुर्धर थे, जो ऊनतालकी फ़सीलोंपर उभरने वाले एक भी सिरको बिना तीरका निशाना बनाये न छोड़नेकी कसम खाकर चले थे ।

भारतीय इतिहासमें प्राणोंका शुल्क देकर खेली जानेवाली यह प्रतियोगिता अद्वितीय थी, अपूर्व थी ।

किन्तु दोनों ही पक्षोंके अनुमान गलत निकले । शत्रु उतना अचेत नहीं था, जितना सोचा गया था । प्रातःकालके उठते हुए बालरविकी किरणोंमें ही दूरसे चमकती हुई धूलको बुर्जोंपर खड़े हुए सन्तरियोंने देख लिया । तत्काल भेरी बज उठी और क्षणभरके भीतर-भीतर मुग़ल फ़सीलोंपर आ गये । उन्होंने धोखा खाया, तो सिर्फ एक बातमें, उन्हें यह स्वप्नमें भी गुमान नहीं था कि आक्रमण एक साथ दो तरफसे होगा, और आक्रमणकारी क़िला सर करनेके लिए नहीं आये हैं, बल्कि बाजी सर करनेके लिए आये हैं—और इसमें अक्लको दखल नहीं होगा ।

राजपूतवाहिनीके निकट आते ही क़िलेपर मार पड़नी आरम्भ हो गई । चूड़ावतोंने दीवारकी रेखाके समानान्तर भीलोंकी एक दुहरी पङ्क्ति बनाई और तीरोंकी छाया तले चूड़ावतोंके अश्व लम्बी-लम्बी रस्सीकी सीढ़ियोंको लिये हुए तेजीके साथ पहाड़ीपर चढ़ने लगे । क़िलेकी बुर्जियोंसे बारूदी तोपें दगनी शुरू हुईं । पत्थरोंके छोटे-बड़े टुकड़ोंके साथ धूल और गुब्बार, और उसमें राजपूत सैनिकोंके कटे-फटे अङ्ग आकाशमें उछलने लगे । मगर क़िलेकी दीवार तक पहुँचना टेढ़ी खीर थी । मृत्युके मुँहमें निर्भय होकर प्रवेश करनेवाले सैनिकोंको उसके विकराल दाँतोंसे बचानेके लिए न वहाँ असख्य हाथी थे, न पहियेदार खड़े तख्ते थे । हर राजपूत शत्रुके पैने हथियारोंके सम्मुख छाती ताने आगे बढ़ रहा था ।

क़िलेकी दूसरी ओर शक्तावतोंने हाथियोंकी सहायतासे ज़ोर बाँध लिया था । लोहेकी मोटी जालीके अभेद्य कवच धारण किये शक्तावत अपनी सारी सेनामें हर स्थानपर मौजूद दिखाई पड़ते थे, भाले और जोधा मुख्य

फाटकको हाथियोंके मस्तकोंकी चोटोंसे तोड़ देनेका उपक्रम कर रहे थे। दूसरी ओरसे ज्यों-ज्यों उन्हें चूड़ावतोंका रणघोष सुनाई पड़ जाता था, त्यों-त्यों उनके शरीरोंमें मानो साक्षात् बिजली भर जाती थी। तोपोंकी गरज इधर भी रह-रह कर सुनाई पड़ जाती थी। मगर एक-एक करके शक्तावतोंने शत्रुके तोपचियोंको ही बेकाम कर दिया था। उनके निशाने अचूक थे।

दोपहर तक इसी प्रकार युद्ध चलता रहा। इस बीच चूड़ावत खाई पार करके क़िलेकी दीवार तक पहुँच चुके थे और उनकी रस्सियोंकी सीढ़ियाँ अनगिनत संख्यामें दीवारके कंगूरोंमें फँस गई थीं। सैकड़ों बाँसकी बनी सीढ़ियाँ दीवारके साथ लग चुकी थीं और उनपर राजपूत, ऊपरसे बरसते हुए पत्थरों और शस्त्रोंसे आहत होकर गिरते-पड़ते ऊपरकी ओर चढ़नेका प्रयत्न कर रहे थे। इधर बालो और जोधाने लोहेकी मोटी जालीकी झूल पहनाकर, माथेपर भारी लोहेका तख्ता लगाकर, तीरोंकी छायामें पहला हाथी मुख्य द्वारकी ओर हूल दिया था।

हाथी द्वारको लक्ष्य बनाकर तेजीके साथ लपका। किन्तु आँखोंपर लोहेका तख्ता बँधनेसे पहले ही सम्भवतः हाथीको यह भान हो गया था कि जिस द्वारसे वह टक्कर लेने जा रहा है, उनमें भारी, मोटी और पैनी कीलोंके छत्ते-के-छत्ते लगे हुए हैं। यदि किसी कारण उन पैनी कीलोंके कलेवर उसके माथेमें घुस गये, तो स्वयं ब्रह्मा भी उसके प्राणोंकी रक्षा नहीं कर सकता। जानवरकी भावना कौन समझे? द्वार तक तो हाथी तेजीके साथ झपटता चला गया और शत्रुके शस्त्र उसके कवचसे आ-आ-कर टकराते रहे। मगर द्वारके पास पहुँचते ही सहसा वह ठिठका, और महावतके लाख अंकुश चलानेपर भी वह लौटकर अपने ही लोगोंको कुचलता हुआ भाग खड़ा हुआ।

समय नहीं था। दूसरी ओरसे चूड़ावतोंका रणघोष तीव्र-से-तीव्रतर होता जा रहा था। जोधा दूसरे हाथी पर स्वयं सवार हुआ। अंकुश हाथ

में लिया और हाथीके मस्तकमें जोरसे चुभो दिया। उन्मत्त हाथी चिंघाड़कर आगेकी ओर भागा। जब तक वह ठिटके, जोधाने एक अङ्कुश और मारा और हाथीने तड़पकर द्वारकी कीलोंमें मस्तक देकर सारे शरीरका वेग तौल दिया। द्वारकी चूलें ज़ोरके साथ हिलकर चरमराईं और ढेर-सा पत्थर उनमें झड़कर नीचे गिर पड़ा। किन्तु मज़बूत कीलोंने हाथीके मस्तकपर लगे भारी लोहेको तोड़ दिया था और कीलें हाथीके मस्तकमें घुस गई थीं। हाथी जोरसे चिंघाड़कर बीस-पच्चीस क़दम पीछे हटा, सूँड़ ऊपर उठाकर मुँह खोला, फिर एक गगनभेदी चिंघाड़ मारी और वहीं भूमिपर पहाड़की तरह पसर गया।

जोधा दूर जाकर पड़ा। साथ ही फिर चूड़ावतोंका रणघोष सुनाई पड़ा और बालोने देखा कि तीसरा हाथी क़दम पीछे हटा रहा है। वह ज़ोरके साथ चिल्लाया: "या तो अब, नहीं तो कभी नहीं...!" महावतने हाथीको पुचकारा, बहलाया, अङ्कुश चलाया, मगर हाथीको शायद अपने साथीकी चीत्कारोंका कारण मालूम हो चुका था। वह आधी दूर जाकर उल्टे पैरों वापस लौट गया। बालोने भेरी बजाई।

कुछ देरमें सोलह-के-सोलह शक्तावत एक स्थानपर एकत्र हो गये। सामने कायर हाथी खड़ा था और बालोका मुख सन्ध्याके सूर्यकी भाँति क्रोधसे लाल हो रहा था। उसकी चौड़ी छाती रह-रहकर उठती बैठती थी और उसका जी चाह रहा था कि हाथीको कच्चा चबा जावे। सहसा एक विचार उसके मस्तिष्कमें कौंधा और हाँफते हुए जोधासे उसने कहा, "हाथी कीलोंके भयसे वापस लौट आते हैं।"

"हाँ", जोधाने कहा। "मस्तकके सामने लगा लोहेका तख्ता उसकी रक्षा कर पायेगा इसमें हाथीको सन्देह रहता है। काश कि इस कम्बख्त जानवरमें इतनी अक्ल न होती...!"

"अच्छी बात है," बालोने होंठ चबाते हुए कहा, "जैसा मैं कहता हूँ वैसा करो।"

आप सरदार हैं, जो कहेंगे वही किया जायेगा," जोधाने कहा

बालोने सीधी आज्ञा दी, "मेरी पीठ सामने करके हाथीके मस्तकके साथ मेरे शरीरको बाँध दो। पीठ पर लोहेका तख्ता बाँधो और हाथीको हूल दो..."

यह बात सुनकर शक्तावत भौंचक्के रह गये। क्या यह संभव हो सकता था? क्या यह सम्भव है? जोधाने कहा, "यह आप क्या कहते हैं! द्वारके और हाथीके मस्तकके बीचमें आप पिस जायेंगे। अगर तख्ता टूट गया, तो कीलें हाथीके मस्तकको छेदनेसे पहले आपके बदनको पार करेंगी..."

"यही तो मैं चाहता हूँ। यही हाथी चाहता है कि उसके मस्तकपर आनेवाले संकटको कोई जीवित मानव-शरीर अपने ऊपर ओट ले.। देर न करो। हमें चूड़ावतोंसे पहले किलेके भीतर पहुँचना है—जिन्दा या मुरदा, हममेंसे किसी-न-किसीका शरीर चूडावत सरदारसे पहले ऊनतालके भीतर होना चाहिए। जल्दी करो, समय हाथसे जाता है। मैंने हाथीको अपनी छातीपरसे गुजारा है, उसके ज़ोरसे मैं मर नहीं जाऊँगा।"

जोधाका सिर चकराया। बाकी भाई एक क्षणके लिए किंकर्त्तव्य-विमूढसे खड़े रहे। जब बालोकी आवाजने दहाड़कर कहा, "जल्दी करो, मूर्खो, समय जा रहा है!" तो वे सहसा मशीनके पुरजोंकी भाँति काम करने लगे।

बालोके शरीरको औंधा करके हाथीके मस्तकके साथ और बालोकी पीठपर लोहेकी बहुत मोटी चादर बाँध दी गई। हाथीको अपने मस्तकपर जीवित मनुष्यके शरीरका स्पर्श हुआ और उसे सन्तोष हो गया कि कीलोंके तीखे संस्पर्शको अनुभव करनेवाला उससे पहले उसका मालिक है। इस बार एक ही अंकुश पर्याप्त हुआ और हाथी ऊनतालके मुख्य फाटककी ओर वेगके साथ दौड़ा, जैसे जीवित महाकाय पर्वत उड़ा जा रहा हो।

ऊपरसे सैकड़ों शस्त्र और पत्थर बरस पड़े और हाथीके शरीरके

साथ फूलकी तरह लगकर पृथ्वी चूमने लगे। द्वारके निकट पहुँचते ही महावतने एक ज़ोरका अङ्कुश चलाया, हाथीने पागल होकर मस्तकका अग्रभाग द्वारकी कीलोंपर पूरी ताक़तके साथ दे मारा। बालोंकी रुकी हुई साँस जैसे एक बार छूट जानेकी हुई, मगर रह गई। द्वारकी चूलें भी उसी अनुपातसे मानो उखड़ते रह गईं।

महावतने एक अङ्कुश और किया। उसी समय ऊपरसे एक भारी पत्थर आया और महावतकी पीठपर धमाकेके साथ गिरा। पकड़ छूट गई और वह धराशायी हो गया। हाथी वेगसे पीछे हटा और महावतको अपने पैरोंतले कुचलता हुआ फिर दूनी शक्तिसे द्वारके साथ आ टकराया... फिर तीसरी बार, फिर चौथी बार.. और पाँचवी बार टक्कर मारने ही लोहेकी मोटी चादर दुहरी हो गई। एक दबी हुई चीख हाथीके मस्तकके ऊपरसे सुनाई पड़ी। किन्तु शोक! हाथीको लौटा लेनेवाला महावत वहाँ मौजूद था—बालोंकी साँस छूट गई थी.. हाथीने किसी ओर ध्यान न देकर एक बार द्वारपर उसी वेगके साथ और प्रहार किया, और भारी फाटक अरराकर पीछेकी ओर ढह पड़ा।

शक्तावत भाई प्रसन्नता और आशङ्काके सम्मिलित वेगसे अपनी सेनाओंको लिये-लिये हाथीके पीछे-पीछे किलेके भीतर घुस पड़े। चूडावतों का भारी रणघोष अब भी सुनाई पड रहा था—किलेके भीतरसे या बाहरसे वह कोई भी निश्चय न कर सका। उन्होंने आगे जाकर हाथीको रोका और उसे बैठाया। फिर लोहेकी चादरकी हालतको देखकर सहसा सभीका कलेजा मुँहको आ गया। चादर फट चुकी थी और गरम-गरम मानव-रक्त उसकी फटी हुई दरारोंमेंसे निकलकर. पूरी चादरको भिगोता हुआ हाथीकी सूँडपर बह रहा था।

भाइयोंने मिलकर बालोंके क्षतविक्षत शरीरको हाथीके मस्तकसे अलग किया। वह अचेत था। किन्तु साँस न जाने कैसे अभी धीमी-धीमी चल रही थी।

आस-पासके सैनिकोंने राणा अमरसिंहके आते-न आते क़िलेको अपने अधिकारमें कर लिया। मगर आधा किला शक्तावतोंके अधिकारमें आया और आधा चूडावतोंके। चूडावत-सरदारका भी प्राणान्त हो चुका था, और उनका शव भी किलेके भीतर उस समय पाया गया, जब शक्तावत किलेको अधिकारमे ले रहे थे। बादमें चूड़ावत सैनिकोंने आकर समान रूपसे किलेको अधिकार मे लिया।

चूड़ावत-सरदारके शव और बालोके अचेत शरीरको देखकर राणा अमरसिंहकी आँखोसे रोकते-रोकते भी पानी बह निकला। वह एक हाथ बालोकी रक्त-रंजित पीठपर और एक हाथ चूड़ावत-सरदारकी छातीपर रखते हुए भूमिपर गिर पड़े।

कुछ देर बाद उन्हे हटनेके लिए कहकर राजवैद्यने बालोकी नाड़ी देखी, और उठकर बोला, "थोड़ी देर बाद नाड़ी छूट जायेगी। मृत्युसे पहले एक बार चेतन किया जा सकता है—कहिए तो..."

"हाँ, हाँ, करो, करो," राणा अमरसिंहने कहा। "मरने से पहले उसे यह तो पता चल जाये कि उसके प्राणोका मूल्य पूरा-पूरा उसे मिल गया है, और आजसे शक्तावतोंका यह अधिकार होगा... "

"ठहरिये, राणाजी," एक चूडावतने आगे बढकर राणाको आगे बोलनेसे रोका। "मेरा दावा है कि चूडावतोंने पहले किलेके भीतर प्रवेश किया।"

राणाके नेत्रोंके डोरे खिच गये। वह कड़े शब्दोंमें बोले, "प्रमाण?"

"यह रहा प्रमाण," चूड़ावतने अपने पीछेसे कुछ साथियोंको आगे आनेके लिए जगह दी। उन लोगोंके हाथमें एक चूड़ावतका शरीर था। राणाके सम्मुख पहुँचकर उन्होंने उस व्यक्तिके कानोंमें झुककर कहा, "राणाजीके सामने हो। कह दो जो कहना हो।"

उस व्यक्तिने धीरेसे आँखें खोली और कहा, "राणाजी, अधिक

नहीं बोल सकता, क्षमा करें...चूड़ावत-सरदार जब फसील पर पहुँचे, तो उसी समय...शत्रुके तीरसे उनका स्वर्गवास हो गया! वह फसीलके ऊपर ही गिर पड़े! उसी समय पीछेसे मैं पहुँचा। सामने ही किलेका चरमराता हुआ फाटक दिखाई पड़ रहा था। मैंने चूड़ावत-सरदारके मृत शरीरको हाथोंमें उठाकर किलेके भीतर फेंक दिया, और प्रमाणके लिए सामने ही टूट कर गिरते हुए फाटकमें एक तीर मारा। तीर लगनेके साथ ही साथ फाटक.. पीछेकी ओर गिर पड़ा और और मेरा तीर आपको उसके नीचे मिलेगा। पहले मेरा तीर फाटकके नीचे दबा, उसके बाद शक्तावत किलेमें घुसे...यही मेरा प्रमाण. ." और उस वीर सैनिकने अपनी बात शेष करके, तीन बार हिचकियाँ लेकर दम तोड़ दिया।

राणाने एक घूँट-सा निगला। एक बार उनकी निगाहें फिर बालो और चूड़ावतके शरीरोंपर पड़ीं और फिर उन्होंने दोनों हथेलियोंसे उन आँखोंको ढक लिया। धीमे शब्दोंमें उनके मुँहसे निकला, "मेरे अधिकारमें कुछ नहीं है। मैं मेवाड़का राणा नहीं हूँ. ओह! इस बाजीमें मैंने अपने दोनों हाथ कटवा दिये हैं.. इस अपंग राणाका केसरिया ध्वज निश्चय ही चूड़ावत लेकर चलेंगे, किन्तु. .कोई मुझे बताओ कि मैं इस हारे हुए विजेताको क्या दूँ!"

सभी उपस्थित जनोंके मुख शोक और परितापसे झुक गये। राजवैद्य अपनी परिचर्यामें लगा रहा। कुछ देर बाद बालोके नेत्र खुले। कुछ देर स्थिर रहकर उसकी दृष्टि चारों ओर उपस्थित चेहरोंको पहचानने लगी। राणाको देखकर उसकी दृष्टि जोधापर गई और उसके होंठ कुछ फड़फड़ाये। जोधाने कठिनाईसे, उबलकर आते हुए, कलेजेको रोककर कहा, "हाँ, हाँ. हमारी जीतका फल हमें मिल गया.. ।"

बालोके मुखपर एक क्षीण-सी मुसकराहट आई और उसकी आँखें सदाके लिए बन्द हो गईं।



• बन्दी

दिल्लीके बादशाहको दक्षिणमें फँसा हुआ देखकर गुजरातके सुल्तान फीरोज़शाहने राजपूतानेपर चढ़ाई कर दी। नागौरके राजा मानसिंहके बेटे दिल्लीके बादशाहके साथ दक्षिणमें गये हुए थे, इसलिए उसकी सैनिक शक्ति बहुत कम रह गई थी। गुजरातकी इतनी बड़ी सेनाका सामना करनेकी ताब न लाकर मानसिंहने नागौर खाली कर दिया। रनिवासकी वृद्धाओं, राजरानियों और अनुपम सुन्दरी राजकुमारी पन्नाको उसने सीमा प्रदेशके एक छोटेसे पहाड़ी क़िलेमें भेज दिया। फिर अपने घरानेके मूल्यवान जवाहरातों और अपने राज्यके हर खड्गधारी सैनिकको लेकर वह भी उसी पहाड़ी किलेमें जा छिपा।

नागौरपर अधिकार करनेके बाद फीरोजशाहने नागौरके नरपतिको भी अपने अधिकारमें करना आवश्यक समझा, और उससे भी अधिक आवश्यक समझा उस अनुपम सुन्दरीपर अधिकार करना, जिसके लिए उसने राजपूतानेकी रेत फाँकी थी। उसने उसी पहाड़ी क़िलेकी ओर कूच बोल दिया, जहाँ अपने परिजनोंसहित उसकी स्वप्न-सुन्दरीने आश्रय लिया था।

मानसिंहने उस छोटेसे किलेको जहाँ-तहाँसे युद्धकी साजसज्जासे सज्जित करके उस सेहीका रूप दे दिया, जो भीड़ आ पड़नेपर तनकर अपने काँटे खड़े कर लेती है। मगर जिस प्रकार दिनके बाद निशाका आगमन निश्चित होता है, उसी प्रकार इतने दिनों ऐश्वर्यका सुख भोग लेनेके बाद मान-सिंहको अपना पराभव निश्चित दिखाई दे रहा था। हार और जीतकी चिन्ता उसे नहीं थी, चिन्ता थी उन परिजनोंकी, जो उसके भाग्यके साथ

बँधे हुए थे। सबसे अधिक चिन्ता थी राजकुमारी पन्नाकी, जिसने सूरज-मुखीके फूलकी तरह सदा जीवनका प्रकाशमान पक्ष ही देखा था।

इस प्रकाशमान पक्षका चलबिन्दु था एक पन्द्रह सालका लड़का बन्नी। बन्नी एक ऐसे राजपूत सरदारका पुत्र था, जिसने मानसिंहके अधीन, शत्रुओंसे लड़ते वीरगति पाई थी। इसी पहाड़ी क़िलेकी रक्षा करते-करते उस सरदारके घरकी स्त्रियोंने जौहर किया था और जब आक्रमणकारी क़िलेमें घुसा था, तो उसे वहाँ बच्चे और बूढ़े व्यक्तियोंके अतिरिक्त यौवनके नाम एक ऐसा वीरान मिला था जिसके सामने जंगल भी रोता है। वह दृश्य इतना भयानक था कि विजेताको भी क़िलेके भीतर घुसनेका साहस नहीं हो सका था। कालान्तरमें चलकर यह क़िला किस प्रकार वापस मानसिंहको मिला, यह एक बड़ी कहानी है। बालक बन्नी इतना अधिक सुन्दर था कि एक बार अपने परिवारमें उस भोली-भाली मूर्तिको दिखाने लाकर फिर मानसिंह उसे अपने परिवारसे अलग करके धायको सौंपनेमें असमर्थ रहा।

इस तरह बन्नी और पन्ना एक साथ बड़े हुए थे। दो-चार दिनकी छोटाई-बड़ाई छोड़कर दोनोंकी एक ही आयु थी। बीते हुए पन्द्रह सालके अरसेमें बन्नीके रूपमें एक ऐसे व्यक्तित्वका विकास हुआ था, जो मान-वांछित सौन्दर्यमें स्त्रियोंको लज्जित करता था, हँसनेमें खिला हुआ फूल था, चपलतामें गिलहरीको मात करता था। अपना समस्त कोश लेकर उसमें स्वयं जीवन प्रस्फुटित हो रहा था।

रनिवास और राजसभाके बीच एक लम्बी और घुमावदार गैलरी थी। उसी गैलरीसे बाहरकी राजसभाका रनिवाससे सम्बन्ध था। सुलतानकी सेना क़िलेके बाहर क्या-क्या कर रही है और उसके विरोधमें मानसिंहकी क्या प्रतिक्रिया है यह जाननेके लिए रनिवास बहुत अधिक उत्सुक था। बन्नी तीरकी तरह उस गैलरीमें आता था और राहमें खड़ी अनेक राज-रानियोंके द्वारा टोका जाता था :

"अब सरदारोंने क्या निश्चय किया है?"

"किलेकी सेना हँसीखेल नहीं है," बन्नीका उत्तर होता था। "नाकों चने चबवा देंगे...समझ क्या रखा है!"

और इसके बाद बन्नी हवाकी तरह गायब हो जाता था। किसी भी सुन्दर स्त्रीको अपनी सुन्दरतासे लज्जित कर देनेवाला पन्द्रह वर्षका वह विद्युत्की भाँति चपल लड़का अब यहाँ होता था, तो अब वहाँ। उसकी चपलताका अन्त केवल एक कक्ष होता था: राजकुमारी पन्नाका कक्ष।

रात हो गई और राजमहलमें किलेसे छूटनेवाली तोपोंकी आवाज आनी आरम्भ हो गई। क्या दासियाँ, क्या रानियाँ सब गैलरीमें एकत्र हो गये। बन्नीको बाहर गये बहुत देर हो गई थी। बाहरसे समाचार आनेका और कोई साधन नहीं था। अधिकांश रमणियोंके हृदय धड़क रहे थे, कुछके मुँहपर तेज था। एक आशङ्का थी, जो बार-बार अँधेरी रातमें बिजलीकी भाँति कौंध जाती थी: क्या वीर मानसिंह जौहरका निश्चय करेगा?

रात गाढ़ी-से-गाढ़ी होती जा रही थी। दीपक जल उठे थे। तोपोंके दहाने रह-रहकर गरज उठते थे। इसके अतिरिक्त रनिवासमें बाहर होती हुई हलचलका कोई चिह्न नज़र नहीं आता था। तभी सहसा बन्नी आता दिखाई पड़ा। 'बन्नी आया,' 'बन्नी आया,' कहती हुई अनेक रमणियाँ आगे बढ़ीं, किन्तु आशाके विपरीत बन्नीके पगोंमेंसे चपलता कूच बोल गई थी। वह आ रहा था, जैसे कोई उठाये लिये आ रहा हो। एक साथ कई नारी-कंठोंसे प्रश्न निकला: "क्या हुआ...क्या समाचार है?"

बन्नी चुप था। चेहरेपरसे हँसी उड़ गई थी। पलकें धीरे-धीरे झपक रही थीं! केवल पग एक ही चालसे आगे बढ़े जा रहे थे! राजमाताके कक्षके बाहर जाकर वे रुक गये, द्वारपर ही वृद्धा खड़ी थी। उसे देखकर

वह भीतर चली गई। पीछे-पीछे बन्नी गया, और उसके पीछे पचासों रमणियाँ भीतर पहुँच गईं।

बन्नीके मुँहपर पास ही रखे दीपकका प्रकाश हिलता रहा। दो क्षणके लिए कक्षमें ऐसी चुप्पी छाई रही, कि सूई भी गिरती तो आवाज़ सुनाई पड़ जाती। वृद्धाने पलंगपर लेटते हुए पूछा, "क्या बात है? कोई समाचार लाया है रे?"

बन्नीकी दृष्टि दीपककी लौपर जमी हुई थी। सहसा वहाँ उपस्थित नारीवर्गने देखा कि बन्नीका एक हाथ आगे बढ़ा और उसकी उँगलियाँ दीपककी लौ को छूने लगीं, तुरन्त ही चीख मारकर बन्नीने अपना हाथ खींच लिया और घूमकर वह स्त्रियोंके बीचमेंसे राह बनाता हुआ बाहरकी ओर दौड़ा। सब स्त्रियोंके कलेजे जोर-ज़ोरसे धड़कने लगे।

"जौहर होगा!" "जौहर होगा!" "जौहर होगा!" कानों-ही-कानोंमें यह समाचार पलभरमें सारे रनिवासमें फैल गया।

बिछुवा साँपकी तरह बल खाई हुई छोटी-सी चमकदार कटार लिये पन्ना द्वारपर बन्नीके पदचाप सुनकर घूम गई। बन्नीके नेत्र आतङ्कसे फटे हुए थे। पन्नाके नेत्र विस्फारित होकर थोड़ी देरके लिए उन नेत्रोंसे मिले। सहसा पन्नाके मुँहसे निकला: "नहीं, नहीं! मुझे आगसे बहुत डर लगता है। मैं चितापर नहीं चढ़ूँगी। देखो, देखो, मेरे रोंगटे खड़े हो रहे हैं...मैं आगमें पैर नहीं रखूँगी...!"

बन्नीकी दृष्टि एक झटकेके साथ पन्नाके हाथमें थमी बिछुवा कटारपर जाकर स्थिर हो गई। फिर पन्नाके मुँहपर जाकर टिकी। कमरेके झकाझक प्रकाशमें लड़कीका मुँह सरसोंके फूलकी भाँति पीला दिखाई पड़ रहा था। चेहरेके आधे भाग तक खम्भेपर लटके हुए परदेकी छाया पड़ रही थी, मानो उसके नेत्र उस छायामें अपना आतङ्क छिपानेकी चेष्टा कर रहे हों।

बन्नीने कहा, "अभी तीन दिन तक क़िलेके भीतर अनाज और पानी है। तीन दिनमें सुल्तान तोबा बोल देगा.." फिर साथ ही उसने कहा,

'मुझे सुल्तानसे बड़ा भय लगता है। सुना है उसकी लम्बी-लम्बी काली दाढ़ी है और उसकी आँखें हमेशा लाल रहती हैं। वह ऐसा ही होगा, जैसा उस कहानी वाला देव; जिसमें एक राजकुमारीसे विवाह करनेके लिए एक राजकुमार अमर फल लेने जाता है, राजकुमारीको वह देव उठा ले जाता है और राजकुमार उसे देवके पंजेसे छुड़ाकर लाता है, और.... .''

पन्ना एकटक बन्नीका मुँह देख रही थी। वह सोच रही थी कि क्या बन्नी, संसारकी विषमताओंसे अपरिचित भोला बन्नी, उस वीर राजकुमारके स्थानपर अपनेको नहीं रख रहा है? क्या ऐसा कोई राजकुमार हो सकता है, जो इस कठिन परिस्थितिमें राजकुमारी पन्नाकी रक्षा कर सके।

तभी स्मृतिकी एक कलाबाज़ीके पीछे-पीछे उसकी नजरोंमें अरकंडीकी पहाड़ियोंका वह धुँधला आकार साफ होने लगा, जो उसके कक्षकी खिड़कीसे आकाशपर खिन्ची हुई टेढ़ी-मेढ़ी रेखाओंके रूपमें हर संध्याको नजर आता है। इन पहाड़ियोंसे उलझती हुई उसकी दृष्टिमें एक बाँका राजपूत युवक आया। तीन वर्ष पहले अपने दस हज़ार योद्धाओंके साथ इस युवकने उसके पिताके साथ मिलकर शत्रुओंको छकाया था, और अन्तमें विजयश्री मानसिंहको मिली थी। इसके बाद एक छोटेसे बंजर भूभागको लेकर, जो पाँच-छः पीढ़ियों पहले इस युवक उम्मेदसिंहके वंशमें चला आता था और बादमें राजनीतिक घटना-चक्रसे मानसिंहके वंशमें चला आया था। इन दोनों वंशोंमें एक तनातनी खड़ी हो गई। कितनी ही बार पन्नाने युद्धके साजमें सजे हुए उस युवकको देखकर सोचा था कि काश, भविष्यमें चलकर उसे भी ऐसा ही पति मिले। क्या उसमें इतनी सामर्थ्य है कि वह गुजरातके सुल्तानके दाँत खट्टे कर सके?

कहानीकी चर्चा समाप्त करके बन्नी कह रहा था, "हम दोनों एक साथ मरेंगे...ज्वालाओंमें जलकर नहीं...इस कटार से..."

पन्नाकी दृष्टि फिर ऊपर उठी। "बन्नी, क्या तुम अरकंडीकी पहाड़ियों तक पहुँच सकते हो ?"

बन्नी यह प्रश्न सुनकर चौंका। "वाह! कोई भी पहुँच सकता है। इस किलेमें ऐसा कौन राजपूत है, जिसे राजकुमारी पन्ना आदेश दे और वह क़िलेकी दीवारसे नीचे उतरकर सुल्तानकी तेग़का शिकार बननेमें गौरव अनुभव न करे!"

"सुल्तानकी तेगका शिकार नहीं बनना है", पन्नाने सयत स्वरमें कहा, "अरकंडीकी पहाड़ियों तक पहुँचना है......किसी भी कीमतपर पहुँचना है। अगर जौहरकी ज्वालाओंसे इस पूरे रनिवासको बचाना है, तो किसी न किसीको उस पर्वतश्रेणी तक पहुँचना अनिवार्य है ·· ··"

"असम्भव!" बन्नीने कहा। "उम्मेदसिंहका हृदय अब वैसा नहीं रहा। इसके अतिरिक्त सुल्तानकी सेनाका सागर किलेके पत्थरोंको चारों ओरसे छू रहा है। लेकिन राजकुमारी पन्नासे उम्मेदसिंहका क्या सम्बन्ध ?"

पन्नाको आश्चर्य हुआ। बन्नीकी आँखोंमें एक अवर्णनीय ईर्ष्याका भाव दिखाई पड़ रहा था। वह हँस पड़ी, "तुम पागल हो। क्या तुम समझते हो कि पन्ना उसे विवाहका सन्देश भेज रही है ?"

बन्नी तिरस्कारका भाव मुँहपर लाकर कहा, "हूँ! मानो मैं कुछ समझता ही नहीं! अभी बच्चा ही हूँ! तुम क़िलेमेंसे जिसे चाहो भेज दो। पर कहे देता हूँ, सुल्तानके सागरको लाँघकर कोई अरकण्डीकी पहाड़ियों तक नहीं पहुँच सकेगा ..."

"नहीं, नहीं! वह आदमी पहुँच सकता है, जिसके हृदयमें मेरे प्रति श्रद्धा होगी, विश्वास होगा, स्नेह होगा और मेरी इच्छाको पूरी करनेकी लगन होगी। इस किलेमें ऐसा एक ही व्यक्ति है, और वह है बन्नी। बन्नी, क्या तुम मेरे लिए इतना भी नहीं करोगे ?"

"नहीं," बन्नीने कठोरताका भाव मुँहपर लाकर निश्चयके स्वरमें कहा।

पन्नाने होठ काटे। हाथमें पकड़ी बिछुवापर उसकी मुट्ठी कस गई। फिर सहसा ही वह ढीली पड़ गई। मुँहपर हास्य छा गया। बोली, "मैं उम्मेदसिंहको राखी भेजूँगी।"

"राखी!" आश्चर्यके अतिरेकसे बन्नीके मुँहसे निकला।

"हाँ," पन्नाने कहा। "अगर उसने राखी स्वीकार कर ली, तो जौहर नहीं होगा। दस हजार सूरमा सुल्तानकी पीठमें तीर चुभो देंगे। राजपूत चाहे बैरी भी हो, किन्तु एक कष्टमें फँसी हुई राजपूत कन्याकी राखीको अस्वीकार नहीं कर सकता। बोलो जाओगे?"

"पर...पर," बन्नीने आँखें फाड़कर कहा, "यह तो असम्भव..."

"बन्नो, एक ही लक्ष्य है: अरकण्डीकी पहाड़ियों तक पहुँचना। वीर अर्जुनको केवल चिड़ियाकी आँख दिखाई दी थी। तुम्हें भी अपना लक्ष्य दिखाई देना चाहिए। सफल होकर लौटोगे, तो पन्ना तुम्हारी प्रतीक्षामें पलकें बिछाये बैठी होगी। असफल हो जाओगे, तो समझना कि पन्ना भी साथ ही स्वर्ग पहुँच जायेगी...जाओगे?"

"आज ही?" बन्नीने आतङ्कित भावसे पूछा।

"अभी," पन्नाने विचलित स्वरसे उत्तर दिया। "रातका अन्धकार तुम्हारी सहायता करेगा।"

"तो यह बिछुवा मुझे दो।"

"क्यों?" पन्नाने सहम कर पूछा।

"इससे सुल्तानकी छाती चीरूँगा—अगर उसने मेरी राह रोकी, तो यह बिछुवा उसकी छातीमें घुस जायेगा...मूठ तक।"

"तो, लो", पन्नाने बिछुवा आगे बढ़ा दिया। बन्नीकी सुन्दर आँखें एक क्षणके लिए पन्नाके रसीले लम्बे नेत्रोंसे मिलीं और बिछुवा उसके हाथोंमें आ गया।

थोड़ी सी हिचकिचाहटके साथ मानसिंहने इस योजनाको स्वीकार कर लिया। रातके अँधेरेमें ही एक रस्सीके सहारे किलेकी दीवारसे बन्नीको

खाईमें उतार दिया गया। एक पत्तेकी नाव न खड़का और बन्नी खाईके दूसरे किनारेसे जा लगा। इसके बाद खाईसे सिर उठाकर उसने चारों ओर दूर तक देखा।

मशालें-ही-मशालें नजर आ रही थीं। सुल्तानकी सेनाओंके डेरे दूर-दूरतक फैले थे। असंख्य सैनिक हाथोंमें मशालें लिये इधर-उधर गश्त लगा रहे थे। सुल्तानने किलेकी ओरसे अप्रत्याशित गोलाबारीसे बचनेके लिए रातको दिन बना रखा था।

बन्नीकी आँखोंके ठीक सामने दो मशालें थोड़े-थोड़े समयके अन्तरसे आकर मिल जाती थीं और फिर एक दूसरीको पार करके दूर-दूर चली जाती थीं। ऐसे ही एक अवसरको थामकर वह पानीमें से ऊपर उचका और चुस्त गिलहरीकी तरह उसने एक छोटी-सी दौड़ मशालोंके दूसरी ओर दिखाई देनेवाले डेरे तक लगाई। उसने गश्ती सिपाहियोंकी पहली पङ्क्ति पार कर ली थी। मगर उसके आगे असंख्य पङ्क्तियाँ थीं, जिन्हें उसे पार करना था।

दो डेरोंकी आड़में खड़े होकर उसने फूलते हुए दमको साधा। सामने फैले हुए मशालोंके आकाशको एक कोमल चिड़ियाकी भाँति मिचमिचाई आँखोंसे देखा। इसके बाद उसने एक क्षणमें निश्चय कर डाला। लोमड़ीकी तरह वह फुरतीसे बाहर निकला और साँपकी तरह बल खाते हुए रास्तेका तखमीना लगाकर, अन्धकार-ही-अन्धकारमें, सिपाहियोंसे कन्नी काटता हुआ भागा।

अधिक दूरतक वह सिपाहियोंकी नजरोंसे नहीं बच सका। तुरन्त सब तरफ एक शोर मच गया और सैकड़ों सिपाही उसके पीछे लग गये। अब उसने प्रकाश और अन्धकारका विचार भी छोड़ा। कभी दौड़ता-दौड़ता वह किसी मशालके घेरेमें आ जाता, और कभी अन्धेरेमें छिप जाता। किसीको धक्का देता, किसीकी मशाल गिराता बन्नी अभी आधा

मार्ग भ तै नहीं कर पाया था कि धरा गया। उसके कपड़े गीले थे, उसका साँस फूल रहा था और बदनमें मे चिनगारियाँ-सी निकलती प्रतीत हो रही थीं।

जिसने पकड़ा था वह उसे ले चला। इतनेमें और भी पास आ गये। तब एकने उसका मुँह मशालके प्रकाशमें देखकर कहा, "अरे, यह तो औरत है औरत!"

"खुदाकी कसम!" दूसरेने विश्वास न करके पूछा।

"मामूली औरत नहीं, हीरा है हीरा। न हो, तो दाढ़ी मुँड़ा दूँ," पहलेवालेने कहा।

"तोबा! तोबा! जासूसीका काम औरतोंसे लेते हैं। खुदाकी लानत है ऐसे काफिरों पर..."

"तो, सुल्तानके पास..?"

"हाँ।"

नर्त्तकीको फीरोज़शाहके डेरेमें ले आया गया। चेहरा परिश्रम और पकड़े जानेके परितापसे लाल हो रहा था और आँखोंमें खून उतर आया था। बन्दी सैनिकोंके हाथों-ही-हाथोंमें छटपटा रहा था। निगाह पड़ते ही सुल्तान मुँह बाये रह गया। "वाह! क्या हुस्न अता फ़रमाया है अल्लाहने!"

"हज़ूर," पकड़नेवालेने अपना महत्त्व जतानेके लिए कहा, "अभी कमसिन मालूम होती है।"

"मगर राजपूतोंमें औरतोंको जासूसी करते हमने आज तक नहीं सुना था!" सुल्तानने आश्चर्यसे कहा। "अगर यह सच है, तो ये कम्बख्त तो धरती फाड़ डालेंगे।"

"हज़ूर, हाथ कङ्गनको आरसी क्या?" सैनिक बोला। "हुक्म दिया जाये, तो इसकी ज़बानसे भेद उगलवाया जाये?"



"ज़रूर, ज़रूर," सुल्तानने कहा। "यह काम पहला है। बता, ऐ नाज़नीं, इस तरह छिपकर आनेमें तुम्हारा क्या मकसद था ?"

बन्नी एक बार फिर छूटनेके लिए छटपटाया। सैनिकोंने उसे छोड़ दिया! बन्नी त्रस्त हिरनकी तरह चारों ओर छूटनेका साधन खोजने लगा। हाथ और पैर भागनेकी मुद्रामें मुड़े हुए थे! वह चुप था।

फरमाबरदारने कहा, "जहाँपनाह, जब तक यातना न दी जायेगी इनकी ज़बान नहीं खुलेगी।"

"नहीं, नहीं," सुल्तानने वासनापूर्ण दृष्टिसे बन्नीकी ओर देखते हुए कहा। "इसे हमारी ख्वाबगाहमें ले जाया जाये। हम प्यारका हथियार इस्तेमाल करके इससे सब बातें पूछ लेंगे।"

यह योजना सभी सैनिकोंको पसन्द आई। आखिर उन्होंने जो कारगुज़ारी दिखाई है उससे सुल्तान मनोरञ्जन प्राप्त कर रहा है, उससे बढ़कर उनका सौभाग्य और क्या हो सकता था ?

कुछ ही समय बाद सुल्तान अपने उस डेरेमें पहुँचा, जिसमें पड़ा-पड़ा वह गरजती तोपोंके बीच नाज़नीनोंके ख्वाब देखा करता था। यह सही है कि बन्नीने अब तक मुँह नहीं खोला था क्योंकि ज़बानसे अधिक उसका तीव्र मस्तिष्क इस मुसीबतसे भाग निकलनेकी तरकीब सोच रहा था, मगर इस प्रकार अपमानित होनेसे वह बफरा बैठा था। कभी-कभी सुल्तानकी क्षुद्र बुद्धि पर हँसी भी आती थी। सुल्तानको अकेले भीतर आता देखकर बन्नीके शरीरकी धमनियाँ तेज़ीके साथ खूनको इधर-से-उधर फेंकने लगी!



इस स्वप्न सुन्दरीको बाहुओंमें समेट लेनेके लिए हाथ फैलाये हुए सुल्तान आगे बढ़ा। "आ, ऐ नाज़नी, मेरी आगोशमें आ और समझ ले कि तेरी क़िस्मतका सितारा पलट गया है। इस पहाड़ी इलाक़ेमें सिर्फ़ दो टकोंके लिए जासूसीका गंदा काम करनेकी अब तुझे ज़रूरत नहीं

रही। तुझपर गुजरातकी सारी दौलत कुर्बान है...'' और उसने झपट-कर बन्नीको हाथसे पकड़कर खींच लिया, जिससे वह उसकी छातीसे आ लगा।

मगर शीघ्र ही सुल्तानको कुछ विचित्र-सा अनुभव होने लगा। उसके वक्षमें कोई तेज़ धारदार चीज़ चुभती जा रही थी। उसने झटका देकर बन्नीको अपनेसे अलग करना चाहा, मगर उसके दाँत मज़बूतीसे उसकी छातीके वस्त्रको पकड़ चुके थे। इसलिए झटकेसे स्वयं सुल्तानका सन्तुलन बिगड़ गया और वह ज़मीन पर आ रहा।

बन्नी उसकी छातीपर चढ़ बैठा। अब सुल्तानने आँखें फाड़कर देखा कि उसकी छातीपर एक बल खाई हुई चमकदार छोटी-सी कटार सीधी खड़ी थी और उसकी मूठ उस 'नाज़नीन' की गोरी मगर मज़बूत मुट्ठीमें फँसी हुई थी।

''यह क्या करती है, नाबकार! अगर तूने यह नापाक काम कर डाला, तो सारी फौज तुझपर टूट पड़ेगी और तेरे टुकड़े-टुकड़े उड़ा देगी।''

अब पहली बार बन्नीकी जबान खुली, और उसने कहा, ''तेरे इस दुनियासे उठ जानेसे हमारे किलेका सुहाग उठ जायेगा।''

''नहीं, नहीं! ओह! अगर मैं उठ भी गया, तो मेरा बेटा इस किलेको सर करेगा। आह! मुझे छोड़ दे। सच कहता हूँ तुझे मालामाल कर दूँगा। अपने हरमकी खास मल्काका ओहदा दूँगा......आह!'' बन्नी मल्का बनना नहीं चाहता था, इसलिए उसकी कटारकी बारीक नोक सुल्तानकी छातीमें आधा इञ्च पैवस्त हो गई थी। साथ ही वह पन्नाके शब्दोंको सोच रहा था। उसे अपने लक्ष्यपर पहुँचना था। वह सुल्तान की हत्यासे पूरा नहीं होगा। वह मारा जायेगा और पन्ना उसके दुःखसे प्राण दे देगी।

उसने कहा, ''तो, ओ बेवकूफ़ सुल्तान, सुन : मैं औरत नहीं, मर्द हूँ।

और मेरा घर अरकडीकी पहाड़ियोंमें है। मैं अपनी बहनके लिए इस पहाड़ी किलेमें उसके मैकेसे भेंट लेकर आया था कि तेरी फौजने किलेको घेर लिया। मैं वापस अपने घर जा रहा था। अब भी वहीं जाना चाहता हूँ। तू बड़े शौकसे इस किलेको सर कर, मगर मुझे अपने रास्ते जाने दे। नहीं तो मैं तुझे अभी यमपुर भेजता हूँ।"

"तोबा, तोबा!" सुल्तानने आँखें ऊपर चढ़ाकर कहा। "कैसी अहमकाना गलती हो गई है! तोबा, तोबा! लड़के, तू अपने घर जा सकता है..."

"तो उठकर खास अपना घोड़ा डेरेके सामने मँगाकर खड़ा करवा," बन्नीने आज्ञासूचक स्वरमें कहा "और मैं तेरे बराबर बिछुवा लगाये खड़ा हूँ। अगर जरा भी इधर-उधर हुआ, तो बिछुवाके बल खाये दुधारे तेरे शरीरके भीतर जा पहुँचेंगे।"

बन्नी उछलकर अलग हो गया और सुलतान तोबा-तोबा करता हुआ उठकर खड़ा हुआ। बन्नीने बिछुवा उसकी पसलीसे सटा दिया। सुल-तानने पहरेदारको बुलाकर अपना घोड़ा डेरेके सामने लाकर खड़ा करनेका हुकम दिया।

जब घोड़ा आ गया, तो बन्नीने फुरतीसे बिछुवा दाँतोंके बीच दबाया और तीरकी तरह डेरेसे निकलकर सामने खड़े घोड़ेकी पीठपर उछला। अगले ही क्षण अरबी घोड़ा भारी रेत उड़ाता हुआ हवासे बातें करने लगा। पीछे-पीछे सुलतानने उसे पकड़नेके लिए अपने घुड़सवारोंको भेजा। मगर सुल्तानका घोड़ा हाथ न आना था, नहीं आया। इसीलिए तो बन्नीने खास सुल्तानका घोड़ा मँगाया था।

सुबह होते-न-होते बन्नी अरकडी पहाड़ियोंके पीछे जा पहुँचा। गाँवके लोगोंको किलेसे जाने देनेके लिए फाटक खुल चुके थे। उन्हींके साथ लगा-लगा बन्नी महलके भीतर पहुँच गया। सजे हुए घोड़ेके मुँहसे

फेन निकल रहा था और बन्नीका शरीर एक प्रकारसे उसपरसे झुका पड़ रहा था। एक हाथसे उसने अपने सिरकी पगडी थाम रखी थी।

राजमहलके पास पहुँचकर उसने केवल इतना कहा, "उम्मेदसिंह.. " और अचेतन होकर घोड़ेपर लटक गया। लक्ष्य आ गया था, इसलिए चेतनाने कुछ समयके लिए विश्राम ले लेना चाहा।

दोपहरसे पहले ही बन्नी ताज़ा हो चुका था। उसके मुँहसे उसकी कथा सुनकर कुँवर उम्मेदसिंह बहुत हँसे। इसके बाद बन्नीने उनके सामने पन्नाकी राखी रखी। सोनेकी कलीदार जड़ाऊ राखी देखकर कुँवर उम्मेद-सिंहका जोश भड़क उठा। उन्होंने बन्नीके देखते-देखते राखी उठाई और अपनी पगडीमें राखीको कसकर बाँध लिया। इसके बाद उठकर उन्होंने अपने सेनापतिकी ओर देखा : "जय भवानी!"

सेनापतिने कहा, "जय भवानी!"

मुल्तानके घोड़ेपर बन्नी फिर सवार हुआ और कुँवर उम्मेदसिंहके दस हज़ार वीर अगली सुबहको राजस्थानकी रेतको अपने पाँवों तले पीसने लगे। पहाड़ी चूहेकी भाँति कुँवर उम्मेदसिंहने अपने सारे दलको पहा-ड़ियोंमें बिखरा दिया और गुजरातसे मानसिंहके क़िलेको तोड़नेके लिए आनेवाला, पुर्तगालियों द्वारा संचालित, भारी तोपखाना बीच राह में ही रोक लिया गया। साथ-ही-साथ मुल्तानकी रसदकी आमदनी भी बन्द हो गई। कुछ ही दिनोंमें आसपासके राजपूत राजा भी सोई नींदसे जाग उठे। जब उन्होंने देखा कि देर या सबेर मुल्तानको पीछे लौटना पड़ेगा, तो वे भी विजयश्रीमें अपना भाग बँटानेके लिए अपनी-अपनी सेनाएँ लेकर उमड़ पड़े।

मुल्तानको सन्धि करके जीता हुआ इलाका वापस करना पड़ा।

हर्षसे उन्मत्त अरकंडी सेना मानसिंहके क़िलेमें घुसी। साधारण राजपूत सैनिक उम्मेदसिंहके पैर चूमने लगे। हर जगह उम्मेदसिंहके नाम

की माला जपी जाने लगी। मानसिंहने उसे गलेसे लगा लिया। बोला, "जो माँग लोगे वही दे दूँगा। सब कुछ तुम्हारा है।"

कुँवर उम्मेदसिंहने पीछे खड़े बन्नीको आगे करके कहा, "और इस स्त्रीको क्या देंगे ?"

बन्नी शरमके मारे लाल हो उठा। मानसिंहने उसे पैर छूनेसे रोकते हुए हृदयसे लगाकर कहा, "पन्ना मेरी बेटी है, तो बन्नी मेरा बेटा है।"

कुँवर उम्मेदसिंहने निराश स्वरसे कहा, "तब तो मेरे लिए कुछ भी नहीं रह जाता।"

मानसिंह प्रसन्न होता हुआ बोला, "आप मुँहसे कहिये तो सही। फिर देखिये, वह वस्तु आपके सिरपर न्योछावर होती है या नहीं।"

कुँवरने कहा, "तब, मुझे अपने परिवारका सबसे सुन्दर रत्न, पन्ना, दीजिये।"

मानसिंहने कहा, "क्या! आप राजकुमारी पन्नाका पाणिग्रहण माँगते हैं। कुँवर, एक बार फिर सोचिये, राजकुमारी पन्ना आपको राखी-बंद भाई बना चुकी है।"

बन्नीका मुँह देखते देखते सफ़ेद पड़ गया। इस वार्तालापके बीच उसके चेहरेपर एक रंग आ रहा था और एक जा रहा था।

कुँवरने कहा, "आप बुजुर्ग हैं, मेरा विचार है कि इतना अवश्य जानते हैं कि विवाहसे पहले संसारकी प्रत्येक नारी पुरुषके लिए माँ है या बहन है। फिर, मैंने उस राखीको अपनी पगड़ीमें रखा है, हाथमें नहीं बाँधा है।" यह कहकर उन्होंने अपनी पगड़ीमेंसे उस राखीको निकाला और हथेलीपर रखकर मानसिंहके सामने कर दिया।

बन्नीका मुँह फ़क् हो गया। मानसिंहने कहा, "इसका निर्णय केवल पन्ना ही कर सकती है, कुँवर जी, यदि वह हृदयसे आपको भाई मान चुकी है, तो खेद है कि मेरे पास इस प्रार्थनाको पूर्ण करनेकी शक्ति नहीं होगी; यदि वह स्वीकार कर लेती है, तो पन्ना आपकी है।"

प्रसन्नतासे फूले न समाकर कुँवरने कहा "मुझे स्वीकार है, वन्नी, स न, हम अतिथिगृह.. ..!" लेकिन वन्नी वहाँसे लोप हो चुका था।

आज फिर वही गैलरी थी। वे ही रमणियाँ गैलरीमें एकत्र बिखरी हुई थीं। उसी प्रकार कुँवर उम्मेदसिंहके स्वागतके समाचार जाननेकी उत्सुकता सबके हृदयमें थी और उसी प्रकार वन्नी तीरकी तरह, उन सबके टोकनेकी परवाह न करता हुआ, पन्नाके कक्षकी ओर भागा जा रहा था। कमरेमें पैर रखते ही देखा पन्ना सजीधजी खड़ी थी। आज उसका रूप और भी अधिक तीव्रताके साथ निखर आया था। वन्नीको आते देखकर वह हर्षसे लगभग चीत्कार कर उठी : "वन्नी !"

वन्नी दरवाज़ेके पास ही खड़ा हो गया। उसके नेत्र पन्नाके नेत्रोंसे मिले और वह बोला, "तुमने जो कहा था वह मैंने कर दिया..."

"ओह ! तुम कितने अच्छे हो, वन्नी !" पन्नाने कहा।

वन्नीपर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। उसका मुख पूर्ववत् ही गम्भीर था। वह बोला, "तुम मेरे लौटनेकी प्रतीक्षामें पलकें बिछाये बैठी थीं.."

पन्ना घबराई, "तुम ऐसे क्यों देख रहे हो ! क्या बात है ?"

वन्नीने नहीं सुना। उसकी आँखें स्थिर थीं और उनमें असंख्य प्रश्न झाँक रहे थे। उसने आगे कहा, "और मैं यह भी नहीं समझता था कि कुँवर उम्मेदसिंहको विवाहका सन्देश भेज रही थी..."

"नहीं, नहीं," पन्नाने नकारस्वरूप अपनी हथेली आगे बढ़ाकर कहा।

"तब कान खोलकर सुनो :" वन्नीने कहा, "कुँवरने किलेकी रक्षा की है। कुँवरके ही कारण किलेमें जौहरकी ज्वालाएँ नहीं उठीं। मगर कुँवरने तुम्हारी भेजी हुई राखी भी नहीं पहनी। वह पगड़ीमें रखकर उसे यहाँ लाया है। वह राखी लौटाकर इसके बदलेमें तुम्हारा हाथ पकड़ना चाहता है। अब बात तुम्हारी हाँ या नापर अटक गई है। कहो क्या कहती हो ?"

पन्नाको अपने कानोंपर विश्वास नहीं हो रहा था। पल भरमें अतीत और भविष्यके अनेक विचित्र चित्र उसकी पलकोंपर छायापटकी भाँति थिरक गये। वही कुँवर उम्मेदसिंह, जिसे देख-देखकर वह अपने भावी दूल्हेके रूपकी कल्पना करती थी, आज उसका दूल्हा होनेके लिए तत्पर है, आन उसके ऊपर अटकी हुई है..। और सामने खड़ा है बन्नी... उसका वह कल्पनाशील दावेदार, जिसने केवल उसके इङ्गितसे अपनी जानको एक टूटे हुए पत्तेकी भाँति किलेकी खाईके पानीमें डाल दिया था।

धीरे-धीरे वातावरण भारी-से-भारी होने लगा। प्रकाशकी जगह अन्धकारके टुकड़े काले बादलोंकी तरह घिर-घिरकर कक्षमें फैलने लगे। पन्ना लड़खड़ाई और उसने खम्भेके परदेको पकड़कर उसका सहारा लिया। उसकी पुतलियाँ विचार-सागरमें डुबकी लगाते-लगाते ऊपर चढ़ गईं और वहीं खम्भेपर अपने बदनकी रगड़ लगाती हुई फ़र्शपर गिरने लगी। उसकी यह अवस्था देखता हुआ बन्नी स्थिर खड़ा था। वह केवल अपने प्रश्नोंका उत्तर चाहता था।

सहसा पन्नाकी मुद्रा कड़ी पड़ गई। नेत्र पूरे खुल गये। उसने स्थिरताके साथ खड़े होते हुए कहा, "लाओ, मेरा बिछुवा वापस करो, जो तुम मुझसे चलते समय ले गये थे।"

लेकिन एक ही लड़ाईमें भाग लेनेसे बन्नी समझदार हो गया था। उसने कहा, "तो यही है तुम्हारा उत्तर! यह बिछुवा तुम्हारे काम आ सकता है, तो मेरे भी आ सकता है।" कहकर वह वहाँ एक पल भी नहीं ठहरा।

बेटीकी चुप्पीसे मानसिंहने स्वीकृतिका अर्थ लगाया। जब तक विवाहकी विधियाँ सम्पन्न होती रहीं, पन्ना अधखुली हुई आँखोंसे सब निरखती रही। बन्नी स्थिर भावसे अपनी शक्तिभर सब कामकाजमें हाथ बँटाता रहा। जब पन्नाका डोला विदा होने लगा, तो बन्नी दूर खड़ा उसे देखता

रहा। उसी समय एक दासीने आकर उससे कहा, "राजकुमारी पन्ना तुम्हें बुलाती है, डोलेमें है!"

एक क्षणके लिए बन्नीके भावसे मालूम हुआ कि वह पन्नाकी इस प्रार्थनाको स्वीकार नहीं करेगा। मगर फिर वह हिला और धीमे पगोंसे डोलेके पास गया, पन्नाने स्वयं अपने हाथोंसे आवरण उठा दिया। फिर बोली, "मैं जा रही हूँ!"

बन्नी चुप रहा।

"जिस दिन मैं सुनूँगी कि तुमने बिछुवा छातीमें चुभो लिया है उस दिनमें मैं भी विष खा लूँगी।" पन्नाकी आँखें डबडबा आईं।

बन्नी इस बार भी चुप रहा।

पन्नाकी आँखोंके उमड़ते आँसू उसके गालोंपर बह चले। विचलित स्वरमें उसने कहा, "बन्नी, क्या तुम नहीं समझते कि मनुष्य कितना पराधीन होता है। राजकुमारी पन्ना देवदानवकी कहानियों वाली राजकुमारी नहीं है, बल्कि अपने परिवार, समाज, राज्य और राजनीतिक घटनाओंसे बँधी हुई नारी है, काश कि कुँवर उम्मेदसिंह हमारे परिवारके रक्षक बनकर न आते, काश कि तुम उनकी जगह होते! बन्नी, इतिहासमें एक भूल हो गई है। क्या तुम इस भूलके कारण अपने स्वप्नोंकी पन्नाको दण्ड दोगे?"

बन्नीने बच्चोंकी भाँति अपने अंगरखेके पल्लेसे उमड़ती हुई आँखोंको पोंछा। यही उसका उत्तर था। उसने कहारोंको सङ्केत किया और उन्होंने डोला उठा लिया। पोंछनेपर भी बन्नीकी आँखोंसे आँसू ढलते रहे। बहुत देर तक वह पन्नाके डोलेको देखता रहा, जब तक कि वह दृष्टिपथसे ओझल होकर उसकी आँखोंकी पुतलियोंमें न समा गया।

एक मुसकराहट बन्नीके मुखपर आई और विलीन हो गई।

• मूँछका बाल

उस दिन रहस्यमय सम्राट् अकबरकी दाढ़ीपर गुलाबजल लगाते-लगाते जब नुसरत हज्जामने डरते हुए यह निवेदन किया कि वह तन्त्र-मन्त्रकी विद्यामें पारङ्गत है यहाँतक कि आदमीको जीवित ही जन्नतमें भेज सकता है, तो विद्वान् बादशाहको बड़ा कुतूहल हुआ।

बादशाहने गम्भीर होकर कहा, "नुसरत, हमारी इतनी बड़ी शहंशाहियतमें तेरे जैसा बुद्धिमान् मनुष्य और कोई नहीं है!"

थोड़ी ही दूरीपर रेशमी वस्त्रकी प्रतीक्षामें खड़ी लौंडी दाँतोंमें उँगली देकर होंठोंसे मुसकराई। शायद वह बादशाहके व्यङ्गको समझ रही थी।

हज्जामने कहा, "आलीजाहके मुँहसे भरे फूलोंको चुन लूँ। हज्जाम तो आखिर हज्जाम ही है। कौन नहीं जानता कि हजूरकी सल्तनतमें अक्ल जहाँ पहुँचकर दम तोड़ बैठी है, वह राजा साहब बीरबल हैं।"

अकबर उसी मुद्रासे बोला, "मालूम होता है कि जन्नतमें तेरा कोई कान अटका हुआ है।"

नुसरत बोला, "हजूरकी उमर चाँदसितारोंसे बातें करे। इन खूबसूरत चमकती गेंदोंके ऊपर, जन्नतकी रंगीन चारदीवारीके भीतर, हजूर आलीजाहके पुरखाकी रूहें तैर रही हैं। बेटेपर अपनी जान कुरबान कर देनेवाले गाज़ी पादशाह बाबर और खुदाकी इबादतकी राहमें कुरबान हो जानेवाले गरीबपरवर बादशाह हुमायूँकी आत्माएँ रात-दिन जहाँपनाहकी जानको सा-लों दुआएँ देती होंगी। इस विद्याको जानकर उनकी खैरियतका पता लगानेका ख्याल ही गुलामके दिलमें सबसे पहले उठा था। मगर सल्तनतके सबसे अधिक बुद्धिमान् मनुष्यके अतिरिक्त और कोई इस विद्याको सीखकर जन्नतमें कैसे पहुँच सकता है?"

बादशाहका दिल चाहा कि उसी वक्त हज्जामका सिर धड़से अलग करनेका हुक्म दे। लेकिन वह ठट्ठा करके खाता था। वह ठठाकर हँस पड़ा और नुसरत सहमकर बादशाहकी ओर देखने लगा।

अकबर बादशाह किस समय विनोदको अपने हृदयमें प्रश्रय देता था और किस समय क्रोधको—इसका पता आजतक किसीको भी नहीं चल पाया था। नुसरत कोपके प्रहारसे बाल-बाल बच गया। दाढ़ी बनानेका काम खत्म हुआ और उसने जल्दी-जल्दी अपना सामान बुकचेमें बन्द करके तीन बार ज़मीनको चूमा। उसके जानेके बाद अकबर फिर एक बार जी खोलकर हँसा। लौंडी नज़रें नीची किये रेशमी वस्त्र और जलका पात्र लेकर आगे बढ़ी। सोनेकी टूँटीसे उसने बादशाहके हाथोंपर पानी डालकर चपलताके साथ उन्हें पोछा। बादशाहने गुलाबजलसे मुँह धोया। उसी समय कक्षके बाहर खड़ी लौंडीने सेवामें उपस्थित होकर विनयपूर्वक कहा, "जहाँपनाह, राजा साहब वीरबल, मिर्जा राजा मानसिंह, हजरत मुल्ला-दो प्याज़ा और वजीर सदर अब्बुलफजल साहब क़दमबोसी चाहते हैं।"

"बहुत खूब!" अकबर इस समय अपने इन रत्नोंका आगमन सुनकर प्रसन्न होता हुआ बोला, "हाजिर किये जायें।"

सब लोगोंने कक्षके भीतर आते ही तीन-तीन बार माथे तक हाथ ले जाकर गिराया। बादशाहके चेहरेकी तरफ़ देखकर वीरबलने कहा, "जहाँपनाह, साफ़ हो गई!"

बादशाहने घुटी हुई ठोढ़ीपर हाथ फेरते हुए भृकुटी चढ़ाकर पूछा, "क्या साफ हो गई राजा साहब!"

राजा वीरबलने कहा, "हजूर, रीवाँके राजा रामचन्द्र वाली बात साफ हो गई. ."

वज़ीर अब्बुलफज़लने कहा, "हजूर, बीचमें दखलअन्दाजीकी माफी चाहता हूँ, बात बिल्कुल भी साफ़ नहीं है, बल्कि ज्यों-की-त्यों उलझी

हुई है। तीन साल हो गये, रीवाँका राजा हर बार अपने बेटोंको खिराज अदा करनेके लिए भेज देता है, मगर खुद कभी दरबारमें नहीं आता। यह ठीक है कि हम लड़ाई नहीं चाहते, मगर इसका यह मतलब नहीं कि हमारे आधीन राजा हमें बराबरी तकका दरजा न दें। तीन सालके बाद राजा रामचन्द्रके खुद आगरेके दरबारमें उपस्थित होनेकी बात थी, मगर वह इस चौथे साल भी नहीं आया।" अब्बुलफज़लने कमरेमें बिछी हुई स्वच्छ चाँदनीके ऊपर अपने खंजरकी मूठकी नोकसे एक गहरी रेखा खींचते हुए कहा, "...अब रीवाँनरेश मुग़ल दरबारके सम्मानके रास्तेमें एक ऐसी लकीर बन गया है, जिसे मिटाये बिना शहंशाहियतकी भाग्य-रेखाको अपना बड़प्पन कायम रखना मुश्किल हो गया है।"

बादशाहने अपने रत्नको प्रशंसाकी निगाहसे देखते हुए कहा, "खूब! माबदौलतने युद्धके पक्षमें फ़ज़ल साहबकी दलीलोंको सुना। आप क्या कहते हैं, राजा साहब?" अकबरका सङ्केत बीरबलकी ओर था।

राजा बीरबलने कहा, "जहाँपनाह, इस अकिञ्चनका विचार है कि फ़ज़ल साहबने जो रेखा इस बेशकीमती चाँदनीके ऊपर खींचकर इसका बड़प्पन दिखाया है, वह इस रेखाको मिटाये बिना भी छोटा किया जा सकता है।" इसके बाद बीरबलने लौंडीके हाथमें मोरकी पर्गी ली और उससे चाँदनीपर खिंची पहली रेखाके पास ही एक और बड़ी रेखा खींचते हुए बोले, "देखिए, जहाँपनाह, फ़ज़ल साहबकी खींची हुई युद्धकी लकीर मेरी शान्तिकी लकीरसे छोटी हो गई..."

अकबर जोरसे चिल्लाया, "वाह, वाह! आपने कमालकी दलील दी है!"

राजा मानसिंह बोले, "अगर राजा साहब इसे व्यवहारमें भी कर दिखाएँ, तो यह करिश्मा सचमुचमें बहुत बड़ा माना जायेगा।"

बीरबलने कहा, "मैं राजा रामचन्द्रको मुग़ल दरबारमें ले आऊँगा, अगर जहाँपनाहकी ओरसे यह आश्वासन प्राप्त हो सके कि उनका ख्याल

एक अधीन राजाकी तरह न होकर सम्मानित अतिथिकी भाँति होगा।"

मुल्ला-दो-प्याजा चहके, "अजी, खुदाका नाम लो! राजा रामचन्दर जैसा घमंडी आदमी इस दुनियाके तख्तेपर दूसरा कोई हो सकता है यह शुबेकी बात है। वह आगरेमें पैर रखनेको भी हिमाकत समझता है।"

बादशाहने कहा, "यह बात तो ठीक है। राजा रामचन्द्रका दिल माबदौलतकी तरफ़से साफ नहीं है। हम सारे हिन्दुस्तानको मिलाकर एक ऐसा आईना बनाना चाहते हैं, जिसमें विदेशी हमलावर अपनी सूरत देखते ही डर जाये। हिन्दुस्तानके छोटे-छोटे राजाओंकी अधीनताके बजाय साफदिलीकी हमें ज्यादा जरूरत है। न हम अपने दिलमें कोई घमंड रखना चाहते, न अपने किसी दोस्तके दिलमें अपनी ओरसे कोई ग़लतफहमी चाहते। अगर राजा रामचन्द्र हमारे दरबारमें आनेके लिए राज़ी हो जायँ, तो हम उनका खिराज तक माफ़ कर सकते हैं.. मगर, राजा साहब, आजकल आगरेसे बाहर क़दम रखना आपके लिए खतरेसे खाली नहीं है।"

राजा बीरबलने कहा, "हजूर, जब तक जहाँपनाहका हाथ मेरे सिर पर..."

"आप पुरानी बात दोहरा रहे हैं", बादशाहने कहा। इसके बाद उन्होंने नुसरतवाली बात सबको सुनाते हुए कहा, "इससे ज़ाहिर होता है कि कुछ सिरफिरे मौलवी हर क़ीमतपर आपकी जान लेना चाहते हैं। यहाँतक कि वे बेवकूफ़ हमसे भी यह उम्मीद रखते हैं कि हम उनकी अन्धविश्वाससे भरी बातोंमें आकर आपको अपने पुरखोंकी खबर लानेके लिए ज़िंदा ही जन्नत भेज सकते हैं—नामाक़ूल कहींके!"

"इसके अलावा", मुल्ला-दो-प्याजाने कहा, "यह भी क़तई ग़ैर-मुमकिन है कि राजा रामचन्द्र राजा बीरबलके समझाने-बुझानेसे ही इनके साथ-साथ आगरेकी तरफ़ चल देंगे। लातोंका भूत बातोंसे नहीं मानता।

अगर राजा साहबने इस ग़ैरमुमकिनको मुमकिन कर दिखाया, तो यह गुलाम अपनी दाढ़ी मुँडवा देनेके लिए तैयार है।"

राजा बीरबल बोले, "मैं हजूर आलीजाहसे निवेदन करता हूँ कि माननीय मुल्ला-दो-प्याज़ाकी दाढ़ीको खास शाही हज्जामके हाथों मूँड़े जानेका सौभाग्य प्रदान किया जाये।"

अकबरने कहा, "मावदौलतको खेद है कि मुल्ला-दो-प्याज़ाकी यह इच्छा पूरी नहीं की जा सकेगी, क्योंकि नुसरत हज्जामका सिर आज ही कलम हो जानेके लिए फरमान जारी हो जायगा।"

"माफ़ करें, जहाँपनाह," राजा बीरबलने कहा, "नुसरत हज्जामने सही कहा है। मैं उसकी विद्या सीखकर जन्नतसे हजूरके पुरखोंकी खबर ज़रूर लाऊँगा।"

बादशाह सलामत चौंके। "आप भी, राजा साहब! क्या आप भी इन मूर्खताओंमें विश्वास रखते हैं?"

"जी, जहाँपनाह, रखता तो नहीं था, मगर अब देखता हूँ कि रखे बिना काम नहीं चलेगा। हजूर जहाँपनाह मुझ नाचीजपर विश्वास रखें और नुसरतको कोई सज़ा देनेसे पहले मुझे स्वर्गसे वापस आ लेने दें!"

राजा मानसिंहने कहा, "राजा साहब, आप बड़े मजेदार राजा साहब हैं, इसलिए हम आपको अकेले-अकेले जन्नत तशरीफ़ नहीं ले जाने देंगे।"

बीरबल बोले, "मुझे कोई एतराज़ न होता, मगर अफ़सोसकी जन्नतसे अकेला बीरबल वापस आ सकता है, बाक़ी जो साथ जायेगा वहींपर रहने लगेगा!"

इसपर एक कहकहा लगा। राजा बीरबलने फिर कहा, "जहाँपनाह, क्या यह सेवक एकान्तमें कुछ निवेदन कर सकता है?"

"ज़रूर, ज़रूर," अकबरने कहा। "सज्जनों, मावदौलत एकान्त चाहते हैं।"

फ़ौरन् राजा बीरबलको छोड़कर सब लोग बादशाहके सामनेसे हटकर कक्षके बाहर चले गये। अब राजा बीरबलने कहा, "हजूर, जन्नतके रास्तेसे ही मैं रीवाँ पहुँच सकता हूँ। अगर धरतीके रास्तेसे गया, तो धर्मान्ध शत्रु ज़रूर मुझे खोज निकालेंगे और पहचान लेंगे। अगर मैं रीवाँके राजा साहबको आगरे न ले आऊँ, तो हजूरकी सेवामें नहीं आऊँगा, और सचमुच जन्नत जा पहुँचूँगा...मगर ऐसा नहीं होगा। पहले जो थोड़ा-बहुत अनिश्चय था, वह भी अब नहीं है।"

बहुत देर सलाह-मशवरा करनेके बाद आखिर अकबर बादशाहने राजा बीरबलको जन्नत जानेकी इजाजत दे दी।

शामके समय तक सारे आगरे शहरमें यह विचित्र अफ़वाह फैल गई कि राजा बीरबलको नुसरत हज्जाम जन्नतमें भेज रहा है और वह वहाँसे बादशाहके पुरखोंका समाचार लायेंगे। सैकड़ों-हज़ारों विरोधोंके बावजूद, रोने-चिल्लाने और हँसी-ठट्ठेकी उपेक्षा करते हुए, राजा बीरबल एक विशेष चितापर बैठकर स्वर्ग सिधार गये।

×　　　×　　　×

तीन मासके बाद एक दिन सुबह ही सुबह, जब नुसरत हज्जाम अपने घरपर, बदनपर तेल मल-मल कर दण्ड पेल रहा था, उसकी बीबी भीतर आई और बोली, "मियाँ, दुनिया भिखारीसे बादशाह हो गई, मगर तुम यों-के-यों ही रहे। अगर इस तरह मौकोंको हाथसे जाने दिया करोगे, तो सारी उमर हजामत बनाते ही बीतेगी।"

हज्जामने दण्ड पेलना रोककर पूछा, "क्यों, क्या मुझे कोई बादशाहत का पैग़ाम देने आया है?"

"मुँह धो रखो," बीबीने कहा। "एक-एक सीढ़ी चढ़ा जाता है। जो आदमी जहाँ होता है खुदा उसे वहीं बरकत देता है। बाहर एक बाल ख़रीदने वाला खड़ा है। तुम तो रोज़ लोगोंकी हजामत मूँडते हो। ज़रा

बुलाकर तो पूछो कि क्या भाव लेता है। सड़कपर न फाड़े घरपर उठा लाये। आदमी तिजारतसे ही तरक्की कर सकता है!"

नुसरत मियाँ फ़ौरन् बाहरकी तरफ लपके, तो देखते क्या हैं कि एक बहुत बूढ़ा आदमी गलीमें आवाज़ लगा रहा है, "कोई बाल बेचो बाल!"

न जाने कम्बख्त सुअरके बाल खरीदता है या आदमी के? नुसरत मियाँने दो पल दाढ़ी खुजाई, इसके बाद आवाज़ दे ही तो बैठे: "ओ मियाँ बाल खरीदने वाले.. .. ज़रा यहाँ आना तो।"

बूढ़ा जब पास आ गया, तो बोला, "अरे, आप तो शाही हज्जाम हैं!"

नुसरत मियाँने अकड़कर अपनी दाढ़ीपर हाथ फेरा। बोले, "कैसे पहचाना?"

"ए लो, सुनो इनकी बातें! मियाँ, तिजारत करते हैं, कोई घास नहीं बेचते। बाल खरीदनेका पेशा है, तो बाल काटने वालोंको नहीं पहचानेंगे? लाओ, है कुछ माल?" बूढ़ेने पूछा।

नुसरत मियाँने कहा, "इस वक्त तो नहीं है, मगर कलसे होने लगेंगे। तुम बताओ क्या सेरके भाव खरीदते हो?"

बूढ़ा खिलखिला कर हँसा! "मियाँ, मज़ाक करते हो! कहीं बाल भी अनाजकी तरह सेरोंके भाव खरीदे जाते हैं। हम तो छँटवा बाल खरीद करने वालोंमेंसे हैं, और एक-एक बालकी गिनकर क़ीमत देते हैं।"

हज्जामकी हालत सुनते ही बुरी हो गई। वह आश्चर्यसे बूढ़ेका मुँह ताकने लगे। "एक-एक बालकी क़ीमत! यह कैसे मुमकिन है?"

बूढ़ेने कहा, "मियाँ, तुम कुएँके मेंढक मालूम होते हो। तुम्हें क्या पता कि बालोंकी क्या क्या कीमतें होती हैं। अब यही लो, अगर तुम कहींसे बादशाह बाबरका एक बाल भी ला सको, तो बन्दा यहीं खड़े-खड़े एक हज़ार टका क़ीमत दे सकता है! किसी चीज़की कीमत होती ही इस बात की है कि वह कितनी मुश्किल और दिक़्क़तसे मिल सकती है!"

इनकी बातें सुन-सुनकर आसपासके लोग इकट्ठे होने शुरू हो गये

थे, इसलिए नुसरत मियाँने बूढ़ेको भीतर आनेका इशारा किया और घरमें ले जाकर, एक चारपाईपर दरी बिछाकर उसे बैठाते हुए बोले, "भला, बड़े मियाँ, इतनी कीमत देकर बादशाह बाबरके बालका कोई करेगा क्या ?"

बीवी, जो दरवाजेकी ओटमें खड़ी सब सुन रही थी, मियाँकी इस बेबातकी हुज्जतपर मन-ही-मन पेच ताव खा रही थी। वहींसे बुरका खींचते हुए बोली, "ए मियाँ, तुम्हें इन बातोंसे मतलब क्या, कोई कुछ भी करे। न हो बादशाह अकबर उसे छातीसे चिपकाकर ही सो जाये। मरहूम बादशाह बाबरकी पाक हस्तीकी कोई भी चीज़ उतनी ही पाक होगी।"

बूढ़ेने कहा, "मियाँ, माफ करना, तुमसे तुम्हारी बीवी ज्यादा अक़्लमन्द मालूम होती है।"

नुसरत मियाँ बीवीकी तरफ मुड़कर तुनकते हुए बोले, "ए, तुम जाकर बड़े मियाँके लिए शरबत बना लाओ...हाँ, तो बड़े मियाँ, अगर मैं बादशाह अकबरके बाल आपको ला दूँ, तो आप क्या कीमत देंगे ?"

बड़े मियाँ अपनी सफेद दाढ़ीपर हाथ फेरते हुए बोले, "मियाँ, तुम तो समझकर भी नहीं समझे। जो चीज आसानीसे मिल सकती है, उसकी क़ीमत कुछ भी नहीं होती, जैसे पानी। फिर यह देखा जाता है कि चीज़ किस काममें आयेगी। बादशाह अकबरके बाल उनके पोते-पड़पोते अच्छी कीमत में खरीद सकते हैं, लेकिन तब तक तुम जिन्दा नहीं रहोगे। हाँ, अपने बालबच्चोंके लिए रख जाओ, तो रख जाओ। अच्छी वरासत रहेगी। मगर बादशाह अकबरकी मूँछका बाल ज़रूर कुछ क़ीमत रखता है। उनकी मूँछका एक बाल रखकर कोई भी महाजन लाखों रुपये कर्ज़ दे सकता है। मगर उसके लिए ज़रूरत इस बातकी है कि मूँछका बाल नोचा हुआ होना चाहिए, उस्तरेसे कटा हुआ नहीं, क्योंकि कटा हुआ बाल किसी क़ीमतका नहीं होता।

यह सुनकर नुसरत मियाँ सिर खुजलाने लगे। इतने में बीवीने शरबत

की कतारी गौरसे देखी और [illegible] हाथ उसे मियाँकी नजर किया। फिर बोले, बड़े मियाँ, यह तो बड़ी मुश्किलकी बात है। बादशाह अकबर हमेशा मूँछोंपर उस्तरा ही लगवाते हैं। वह बाल नोचे जानेको बरदाश्त नहीं कर सकते!

बूढ़ा शरबत पीता हुआ बोला, "और अगर किसी दिन नोच डालो, तो तुम्हारा सिर धड़से अलग हो जाये! देखा, हुई न एक बालकी कीमत एक आदमीका सिर?"

नुसरत मियाँने कहा, "मानता हूँ, बड़े मियाँ। आप जैसा अजीब सौदागर मैंने आज तक नहीं देखा था। और कैसे-कैसे बाल आप खरीद सकते हैं?"

"देखो," बूढ़े मियाँ बोले, "वक्त-बवक्त बालोंकी कीमत घटती बढ़ती रहती है। मिसालके लिए, अभी तीन दिन पहले जमुनाके किनारे दीवान-खासकी मजलिस हुई थी। उसमें सुना है कि बादशाह सलामत रीवाँके राजापर इतने खफ़ा हुए कि अगर वह सामने होता, तो उल्टा लटकवा देते। मजबूरन वह सिर्फ़ इतना कहकर रह गये: 'अगर वह हाथ जोड़े माब-दौलतके हुजूरमें न आ खड़ा हुआ, तो माबदौलत उसकी मूँछ नोच डालेंगे, चाहे हमें उसके एक-एक बालके लिए अपने तख्तका एक एक हीरा क्यों न अदा करना पड़े' अब, बंदे खुदाके, अक्लपर जोर देकर सोचो कि बादशाह सलामतके तख्तके एक हीरेकी क़ीमत कम-से-कम एक लाख रुपये तो होगी ही। बस, समझ लो, अगर रीवाँके राजाकी मूँछका एक बाल भी नोचा जा सके, तो एक लाख रुपये उल्टे हाथसे बादशाह सलामतसे वसूल किये जा सकते हैं। वसूल करनेका काम मेरा रहा, बाल तुम नोच लाओ। नकद पचास हजार रुपये दूँगा। बोलो, हो तैयार?"

भीतर नुसरत मियाँकी बीबी तो खुशीके मारे ग़श खाकर गिर पड़ी; नुसरत हज्जामने बूढ़े मियाँके पैर पकड़ लिये। बोला, "बड़े मियाँ, अपना

पता बताते जाओ। आजसे एक हफ्तेके अन्दर-अन्दर रीवाँके राजाकी मूँछका बाल नोचकर न ला दिया, तो मेरा नाम नुसरत हज्जाम नहीं।"

"अच्छी बात है", बड़े मियाँ खड़े होते हुए बोले। "तुम मुझे एक हफ्ते बाद शाही मसजिदकी सीढ़ियोंपर देखते रहना। किसी-न-किसी वक्त वहीं मिल लूँगा। मैं घूमता-फिरता आदमी हूँ, कोई एक ठिकाना नहीं है।"

बड़े मियाँ तो चले गये, मगर नुसरत हज्जामने रीवाँके सफ़रकी तैयारी शुरू कर दी। अर्ज़ी लिखकर बादशाह सलामतसे गैरहाज़िरीकी माफ़ी तलब की और मिलनेपर दोपहर होते-न-होते रीवाँकी तरफ़ कूच बोल दिया।

तीसरे दिन रीवाँके राजाके सामने हाज़िर होकर नुसरत हज्जामने सिर झुकाया और निवेदन किया: "हुज़ूर, हिन्दुस्तानके शहंशाहका खास नाई हूँ। गुलाबजल दाढ़ीपर लगाते हुए ज़रा चुटकी सख्त हो गई, तो खड़े-खड़े निकलवा दिया। महाराज, मेरे बराबर सफाईसे हजामत बनाने वाला सारे हिन्दुस्तानमें मिल जाय, तो मूँछें मुड़ा दूँ। हजामत बनवानेवाला सो जाता है, और जब जागता है, तो देखता है कि दाढ़ी साफ़ हो गई है। सरकार क़दरदानी करें।"

बादशाह अकबरसे दण्डित हुआ व्यक्ति रीवाँके राजाके यहाँ शरण पाये, तो इसमें स्वयं राजा साहबकी ही बड़ाई थी। रीवाँके राजाने उसी दिन दाढ़ी बनवाई और नुसरतको राजकीय नाईका पद मिल गया।

अगले दिन हजामत बनाते-बनाते नुसरतकी नरम उँगलियोंने राजा रामचन्द्रकी लम्बी-लम्बी मूँछोंके दो-चार बालोंको भी रगड़ा और उनकी जड़में उसके नाखूनसे निकली हुई कोकीन लग गई। हजामत खत्म होने तक कौशलके प्रयोगसे उसके हाथ तीन बाल आये। नुसरतकी कुशल उँगलियोंने उन्हें खींच लिया और राजाको बिल्कुल भी दर्द महसूस नहीं हुआ।

दूसरे दिनकी हजामतके वक्ततक नुसरत रीवाँ छोड़ चुका था।

बात-चीतके एक सप्ताह बाद, अपने वादेके अनुसार, बड़े मियाँ शाही मसजिदकी सीढ़ियोंके पास मिले। नुसरतको देखते ही बड़ी उत्सुकतासे उन्होंने पूछा, "लाये?"

"एक नहीं, तीन," नुसरतने प्रसन्नतासे फूलकर उत्तर दिया।

"देखो, भाई," बड़े मियाँने कहा। "इस वक्त तो मेरे पास पचास हजार रुपये हैं। इसलिए एक बाल दे दो। अगर बादशाह सलामतसे इसकी कीमत वसूल हो गई, तो बाकी दोनों भी मैं ले लूँगा। मंजूर है?"

नुसरतको क्या इनकार हो सकता था। उसने पचास हजारको माले-गनीमत जाना। बड़े मियाँने बड़ी बारीकीसे बालका मुआयना किया और जब इतमीनान हो गया, तो पचास हजार रुपये नुसरतके हाथपर रखे। नुसरत हैरतके साथ इस विचित्र सौदेको सम्पन्न होता देखता रहा और जब बूढ़े मियाँ वहाँसे चले गये, तब कहीं जाकर उसे यकीन हुआ कि एक बाल पचास हजार रुपयेकी क़ीमतका हो सकता है।

× × ×

इसके एक सप्ताह बाद रीवाँके प्रमुख सरदारोंमें एक हलचल मच गई। जो भी सामन्त रीवाँके राजासे मिलने आता उसके मुँहपर एक संशयका भाव दिखाई पड़ता और वह रीवाँके राजाको विचित्र दृष्टिसे देखता। आखिर राजा रामचन्द्रसे न रहा गया और एक प्रमुख सरदारको बिदा करते समय उसने कहा, "क्या बात है, आज जो कोई मुझसे मिलता है, ऐसे मिलता है, जैसे मैं राजा रामचन्द्र नहीं, कोई और हूँ?"

"श्रीमान् ही इस रहस्यको भलीभाँति जानते हैं," सामन्तने कहा, "किसे मालूम था कि महाराज रामचन्द्र रीवाँका प्रतापी राज्य बादशाह अकबरके यहाँ बन्धक रख सकते हैं?"

"क्या कहा?" राजा रामचन्द्रकी त्योरियाँ चढ़ गईं। "रीवाँका राज्य बन्धक रखा.. मैंने! असम्भव! यह हमारा अपमान है।"

"जाना चाहता हूँ, सरदारोंके पास इसका प्रमाण है..."

"किन सरदारोंके पास है ?...तुम्हारे पास है ?" राजा रामचन्द्रने मूँछें चबाते हुए कहा।

"जी, श्रीमान्, इसी सेवकके पास है। बादशाह अकबरका राजदूत आज मन्त्रीजीके पास आया था। उसका कहना है कि राजा रामचन्द्र चार दिनके भीतर-भीतर रीवाँका राज्य खाली कर दें क्योंकि जो रकम श्रीमान्ने आगरेके बादशाहसे ली थी उसे वापस नहीं कर सके।"

"आप क्या बक रहे हैं !" राजा रामचन्द्रकी आँखें क्रोधसे लाल हो गईं। "कहीं आप सब लोगोंने मिलकर आज भाँग तो नहीं पी ली ?"

"श्रीमान्, यह खबर जल्दी ही सारे राज्यमें फैल जायेगी और राजपूतोंके हौसले पस्त हो जायेंगे। उस समय सभी लोग भाँग पिये हुये होंगे यह नहीं समझा जा सकता।"

"उस राजदूतको हमारे सामने उपस्थित किया जाये", राजा रामचन्द्र ने कहा।

कुछ देर बाद जर्कबर्क पोशाकमें एक सफेद दाढ़ी वाला बूढ़ा वहाँ आकर उपस्थित हो गया। पीछे कई सामन्त खड़े थे। राजा रामचन्द्रने कहा, "यह गप इन सरदारोंको आकर तुम्हींने सुनाई है कि हमने आगरेके बादशाहके यहाँ अपना राज्य गिरवी रख दिया है ?"

"जी, श्रीमान्," बूढ़ेने निवेदन किया। "यह सत्य मेरी ही वाणीसे प्रकट हुआ है।"

राजा रामचन्द्रकी उत्सुकता बढ़ गई। मन-ही-मन उबाल खाकर उसने पूछा, "तुम्हारे पास इसका प्रमाण है ?"

"जी, श्रीमान्," बूढ़ेने फिर विनयपूर्वक कहा, "इतना बड़ा प्रमाण जिसे कोई भी झुठला नहीं सकता। श्रीमान्ने तीन साल पहले आगरेकी सल्तनतसे एक ऐसी चीज ली थी, जिसकी क़ीमत रीवाँका राज्य है।



श्रीमानने वचन दिया था कि या तो तीन सालके भीतर-भीतर उस चीजको वापस कर देंगे, नहीं तो रीवाँका राज्य बादशाह अकबरको सौंप देंगे…"

"सरासर झूठ है," राजा रामचन्द्रने तलवारकी मूठपर हाथ रखते हुए अपना क्रोध प्रदर्शित किया।

"कृपा करके मेरे सिरको एक राजदूतका सिर समझिए," बूढ़े व्यक्तिने राजा रामचन्द्रकी तलवारकी मूठपर नजर गड़ाकर कहा। "मेरे पास प्रमाण है, और वह है श्रीमान्‌का मूँलका एक थाल, जिसे रीवाँके राज्यके बदले श्रीमान्‌ने आगे काम आनेके लिए बादशाह अकबरके हजूरमें बंधक रखा था।"

"ओह!" राजा रामचन्द्रने अपने कानोंपर हाथ रख लिये। "इतना बड़ा झूठ आज तक नहीं सुना था…"

लेकिन तब तक बूढ़ा एक नक्काशीदार सोनेकी खूबसूरत और कीमती डिबिया अपने कपड़ोंके भीतरसे निकाल चुका था। उसने उसे खोला और राजा रामचन्द्रके सामने रख दिया। "प्रमाण उपस्थित है, श्रीमान्, अपने राज्यके अच्छे-से-अच्छे पारखीको बुलाकर हुजूर इस थालकी पहचान करवा सकते हैं।"

राजा रामचन्द्रने स्वयं डिबिया उठाकर उसमेंसे थालको निकाला। उसे एक ही नजर देखकर उन्होंने कहा, "नहीं, कोई जरूरत नहीं है। हम इसे पहचान सकते हैं। यह हमारी ही मूँलका थाल है।"

"श्रीमान्‌की परख बेदाग है," बूढ़े व्यक्तिने कहा।

"लेकिन हमारे साथ चालाकी खेली गई है।"

"वह क्या चीज थी, जो हमने अपना राज्य बंधक रखकर ली थी?"

"सद्भावना।"

"क्या!" रीवाँनरेश आश्चर्यसे बोले।

"जी, श्रीमान्, तीन साल हुए आपने बादशाह अकबरको वचन दिया था कि आप जल्दीसे-जल्दी उनके द्वारा आपको दी हुई सद्भावनाको

लौटा देंगे। बादशाह अकबरने तीन साल तक उसकी प्रतीक्षा की, मगर आप आगरेके दरबारमें अपने राजकुमारोंको भेजते रहे, स्वयं कभी नहीं गये। आपको भय था कि शायद बादशाह अकबरके सामने आपको सिर झुकाना पड़े। भय और सद्भावना साथ-साथ नहीं रह सकते। बादशाह अकबर आपको अपने अधीन नहीं रखना चाहते। वह सारे हिन्दुस्तानको एक शक्तिके रूपमें देखना चाहते हैं। बिखरी हुई ताकतोंमें एकको दूसरीसे मिलानेके लिए दो ही चीज़ें होती हैं: युद्ध या शान्ति। सन्देह और भय युद्धको जन्म देते हैं, सुविचार और सद्भावना शान्तिको। यदि युद्ध होगा, तो रीवाँका राज्य आगरेकी ताक़तके सामने नहीं बचेगा, शान्ति होगी तो आप आगरेके बादशाहके साथ तख्तपर बराबर-बराबर बैठेंगे, और ऐसा तभी होगा, जब आप आगरा जायेंगे—अपनी मूँछका बाल वापस लेनेके लिए आपको आगरे जाना ही होगा।"

राजा रामचन्द्रकी दृष्टि स्थिर थी। सहसा नजरें नीची करके वह बोले, "और अगर हम न जायें?"

"तो आप रीवाँका राज्य हार बैठे हैं, यह बाल इसका प्रमाण होगा" बूढ़ेने कहा। "सारा रीवाँ राज्य आपको घृणाकी दृष्टिसे देखेगा।"

राजा रामचन्द्र खिलखिलाकर हँस पड़े "और जो हमें घृणाकी दृष्टिसे देखेगा वह इस ज़मानेके चाणक्य राजा बीरबलको नहीं पहचान जायेगा। वाह, राजा बीरबल, यह आपकी ही अक़्लका नमूना है...!"

सामन्तगण आश्चर्यसे यह व्यापार देख रहे थे। बीरबलका नाम सुनते ही उनकी आँखें फट गईं। राजा बीरबल सीधे हो गये और क्षणभरमें ही दोनों राजा एक दूसरेके गले लगे हुए थे।

कहनेकी आवश्यकता नहीं कि राजा बीरबल रीवाँके राजाको अपने साथ लेकर आगरा लौटे और बादशाह अकबरने उनका असाधारण सम्मान किया। लेकिन राजा बीरबल तो साथ-ही-साथ स्वर्गसे बूढ़ों वाली दाढ़ी भी बढ़ाये आये थे और बादशाहके पुरखोंका समाचार भी लाये थे।

किस प्रकार उन्होंने बादशाहको आकर बताया कि स्वर्गमें नाइयोंकी कमी है, बादशाहके पुरखोंके बाल बढ़े हुए हैं, और किस प्रकार बादशाहने यह सोचा कि नुसरतसे अच्छा हजाम स्वर्गमें उनके पुरखोंकी सेवा करनेके लिए नहीं मिल सकता—यद्यपि उसके जलनेके लिए जो चिता बनाई जायेगी वह किसी सुरंगके मुँहपरबनी हुई नहीं होगी—और किस प्रकार नुसरत हजामने बीरबलके पैरोंपर माथा टेककर, उनके पचास हजार रुपये सूद सहित लौटाकर अपनी जान बख्शी करवाई और मुल्ला-दो-प्याजाकी दाढ़ी मूँड़नेका सम्मान प्राप्त किया, ये सब बादशाह अकबर और राजा बीरबलकी लोकप्रिय जनश्रुतियोंकी बातें हैं।

• रामराज्यका सपना

आजसे पूरे दो सौ बरस पहलेकी बात है : ये ही दिन थे, यही समय था, इसी तरहकी राजनीतिक हलचलोंसे भारतके पूर्वका समुद्री प्रवेशद्वार अपने जर्जर ढाँचेमें आश्चर्यके साथ दरार पड़ती देख रहा था। इस दरारमें औरंगजेबके पौत्र और बंगालके सूबेदार आजमशाहकी कृपासे गोरी जातिके पाखण्ड-पण्डितोंने कलकत्ता, गोविन्दपुर और सूतानटीकी जागीर पाकर उसमें अपने पैर जमा लिये थे।

ऐसे समयमें एक दिन कलकत्तामें बंगाल और बिहारके वाणिज्याधिपति जगत्सेठ अमीचन्दकी कोठीमें दैनिक चहल-पहल कुछ अधिक बढ़ गई थी। कारण था कुछ विशिष्ट राजपुरुषोंका असाधारण आदर-सत्कार और उसके लिए जगत्सेठके सेवकोंकी असामान्य तत्परता।

कोठीके एक बहुत बड़े कमरेमें दीवारके सहारे-सहारे चारों ओर मसनदें लगी हुई थीं और उनपर विभिन्न प्रकारके लोग बैठे थे। कोई ऐसा नहीं था, जिसकी कमरमें भवानी न हो और मूँछोंपर हाथ न हो। जो आयुदोषके कारण अभीतक मुच्छविहीन ही थे उनकी बात जाने दीजिये, किन्तु शेषको देखकर यह भली प्रकार कहा जा सकता था कि बंगालका वीररस वहाँ एकत्र हो गया था। इन सबकी केन्द्र-मूर्तियाँ थीं नवाब सिराजुद्दौलाके प्रधान सेनापति मीरजाफ़रके सहकारी दुर्लभराम और उनका नौजवान बेटा छत्रसिंह, जिसकी चौड़ी छातीको देखकर कवि लोग हाथीके मस्तकसे उपमा चाहे न दें, पर उसकी भीगी हुई मसें उसके शरीरके भीतर उबलते हुए खूनका परिचय दे रही थीं।

दुर्लभरामके माथेपर सलवटें थीं, होठोंपर किसी अदृष्टके प्रति अवज्ञा और तिरस्कारकी भावना थी और हाथोंकी उँगलियोंमें कुछ-न-कुछ शीघ्र ही

कर डालनेकी चञ्चलता थी। जगत्सेठ इतने बड़े कमरेके एक कोनेमें नितान्त अकिञ्चन बने एक शाल ओढ़े बैठे थे। सहायक सेनापति कह रहे थे :

"अन्यायका प्रतिकार न हो, तो फिर वही सिरपर चढ़ जाता है। आँखे मींचकर चलनेसे रास्ता समतल होता न कहीं देखा न सुना।"

जगत्सेठने एकबार शान्तिसे पलकें झपकीं, फिर बोले : "अन्यायका प्रतिकार तो होना ही चाहिए। यह सत्य जिस प्रकार भगवान् रामके युगमें प्रतिष्ठित था उसी प्रकार आज भी है। किन्तु न्याय क्या है और क्या नहीं, इसकी परिभाषा भगवान् रामके समयमें और थी, नवाब मन्सूरूलमुल्क सिराजुद्दौलाके समयमें और हो गई है ...", उन्होंने एक क्षण रुककर उपस्थित लोगोंके चेहरोंको सूक्ष्मदृष्टिसे देखा और बातका प्रवाह बदलते हुए कहा, "यही आप कहना चाहते हैं न, सेनापति जी?"

मेज़बानका इतना सहारा पाकर अतिथिका रोष उबल पड़ा। इतनी देरसे जो कुछ हृदयमें दबाये बैठे थे वह सब अनायास प्रवाहित हो चला।

"रामराज्य एक आदर्श राज्य था। तब जो कुछ सत्य था वही सत्य शाश्वत और चिरन्तन है। योग्यता और वीरताके कारण तब एक वानरतक को भगवान्‌की सेवाका अवसर था। आज सत्य नहीं बदल गया है उसका रूप कुरूप हो गया है। जो राजा हो जाये उसीकी आज्ञा मानना कर्त्तव्य हो गया है। परन्तु जहाँ वीरताका सम्मान नहीं, वह राज्य त्याग देने योग्य है।"

इस लंबी-चौड़ी नीति-वार्त्ताके भीतरसे कौन-सा सत्य प्रकट होने वाला है, इसका अभी कुछ पता नहीं था। उस सत्यको उभारकर धरा-तलपर लानेके उद्देश्यसे जगत्सेठने कहा, "किन्तु वीरताका सम्मान करने वालोंकी कमी अब भी नहीं है। पुत्र छतरसिंहने तलवारबाज़ीमें इज्ज-

मोहम्मदको पछाड़कर हम लोगोंका मुँह उज्ज्वल किया है, इसके लिए हम उसे बधाई देते हैं और वचन देते हैं कि पुरस्कार भी देंगे। आज सारे कलकत्तेमें छतरसिंहकी चर्चा है। वीरताका सम्मान न होता, तो यह सब कैसे होता ?"

अब तक छतरसिंह चुप था। अब वह बोला, "वीरता म्यानमें बन्द पड़ी रहे, तो उससे क्या होता है, चाचा जी ? नवाब हजूरवालाने इब्न-मोहम्मदको दूसरे सहायक सेनापतिका पद दिया है। जीता हुआ खिलाड़ी मुँह ताकता रहे और हारा हुआ राजसेनामें सेनापतिका पद पाये, इससे बढ़कर अन्याय और क्या होगा ?"

तब अतिथियोंके साथ आये हुए एक सज्जन बोल उठे, "मुसलमान भाई-भाई हैं..."

दुर्लभराम चौंके। प्रश्नको यह रूप देने का मंशा उनका नहीं था। हो सकता है हृदयमें कहीं यह बात चुभ रही हो, लेकिन ऊपरका मन उसे नहीं जानता था। बोले, "हिन्दू भी मुसलमानोंके भाई हैं..."

"लेकिन सौतेले", जिसकी बात बीचमें कट गई थी उसने फिर उसका सिरा पकड़ते हुए कहा। "म्लेच्छोंकी सेवा स्वीकार करके हम स्वयं म्लेच्छ बन गये हैं। इतनेपर ही बस नहीं है। दिल्लीसे लेकर बंगाल तक मुहम्मद साहबके चेलोंने रामकी सन्तानका जीना दूभर कर रखा है।"

इस बातपर इस छोटी-सी घरेलू सभामें अकस्मात् असाधारण चुप्पी छा गई। मानसिक प्रतिरोधको प्रकट करने आकर सम्भव है दुर्लभरामको भी यह गुमान न हो कि बात राजभक्तिकी सीमा पार कर जायेगी। यही नहीं, उस सीमाके समाप्त होते ही देशद्रोहीकी जो सीमा है उसमें भी काफी दूर तक बात पहुँच गई थी। दुर्लभरामने कहा :

"मैं राजद्रोह की गंध पा रहा हूँ।"

"मुसलमानोंको इस देशसे निकाल बाहर करनेपर ही रामराज्य

स्थापित हो सकता है, इस छोटेसे तथ्यको प्रकट करना भी यदि राजद्रोह है, तो म्लेच्छोंकी तरह मांस-मदिराका सेवन करना ही शायद सबसे बड़ी राजभक्ति गिनी जाने लगे।"

दुर्लभराम उठ खड़े हुए। "मैं इस पापाचारकी बातको सुननेसे पहले उठ जाना ही अच्छा समझता हूँ।"

जगत्सेठ मिची-मिची आँखोंसे सब कुछ देखते-सुनते रहे। राजभक्ति और राजद्रोहके इतने महत्त्वपूर्ण विषयपर उन्होंने अपनी कोई भी सम्मति प्रकट नहीं की। जब दुर्लभरामको लेकर सारी सभा उखड़ने लगी, तो उन्होंने कहा :

"सम्मानित अतिथियोंके लिए भोजन और विश्रामका प्रबन्ध झीलके किनारे वाली कोठीमें है। बाहर सेवक तैयार खड़े हैं। छतरसिंह, मुझे तुम्हारे पुरस्कारके बारेमें दो-चार बातें करनी हैं, इसलिए चाचाका अनुरोध स्वीकार करके तुम्हें यहीं रुक जाना है।"

छतरसिंह और जगतसेठ अमीचन्दको छोड़कर सारा कक्ष उसी समय खाली हो गया। तब एकान्त पाकर जगतसेठने कहा : "छतरसिंह, तुम्हारी चाचीने तुम्हें बहुत दिनोंसे नहीं देखा है। क्या तुम्हें अपनी चाचीसे मिलकर प्रसन्नता नहीं होगी?"

"मेरे मुँहकी बात आपने छीन ली है," छतरसिंहने कहा। "वास्तवमें चाचीजीके दर्शनोंकी कामना ही मुझे यहाँ तक खींच लाई है। नहीं तो मुर्शिदाबादमें अब भी रंगरलियोंकी कमी नहीं है।"

जगत्सेठ मुसकराये। दुशाला सँभलकर उनके कन्धोंपर आ गया और पैरोंमें हल्की ज़रीकी खड़ाऊँ डालनेके लिए उन्होंने उन्हें नीचे लटकाया। फिर उठते हुए बोले, "इधर तुम्हारी चाचीकी अवस्था ही दूसरी है। इस बार तुमसे मिलकर वह तुम्हें वापस आने देंगी, इसमें सन्देह ही है।"

उसी समय उस बड़े कमरे का बाहर जाने वाला दरवाज़ा खुला और

एक मनुष्यने भीतर प्रवेश किया। उसकी ओर उत्सुकतासे ताककर जगत्-सेठने अपने लटकते हुए गालोंको ऊपर उठाया और बोले, "क्या है ?"

हाथ जोड़कर भृत्यने निवेदन किया, "दो फिरंगी आपसे भेंट करना चाहते हैं। मैंने उन्हें बहुत देरसे वाटिकामें बैठा रखा है।"

सुनते ही जगत्सेठकी आँखें अलक्ष्य भावसे चमक उठीं। उन्होंने कहा, "अच्छा, अच्छा! तुम इन्हें लेकर जनानखानेमें जाओ। मैं देखता हूँ उन लोगोंको मुझसे क्या काम है। ये लोग फेरी वालोंकी तरह सुबहसे लेकर शाम तक अपने व्यापारकी धुनमें बस चक्कर ही काटा करते हैं।"

छत्रसिंहको उसकी चाची ही रोक रखना चाहती हो यह बात नहीं थी। वहाँ एक और भी आकर्षण था, जो स्वयं उस वीर सिपाहीको रुक जानेके लिए कम प्रेरित नहीं करता था। कल्पना ही कल्पनामें उसने सोचा--शायद जगत्सेठकी कन्या अब तो बहुत बड़ी हो गई होगी। उसे देखनेके लिए तो वह मुर्शिदाबादसे रोज कलकत्ता आ सकता है। लेकिन कौन आता है और कौन आने देता है?

जगत्सेठका अन्तःपुर छोटा नहीं था। कमोवेश सौ स्त्रियोंका परिवार था। इन सबमें कितनी कुलवधुएँ थीं और कितनी दासियाँ थीं, इसका कुछ ठीक अन्दाज न होनेपर भी छत्रसिंहको सौन्दर्यका नया-से-नया रूप वहाँपर दिखाई पड़ रहा था। कौन जगत्सेठकी साली लगती थी और कौन भानजी-भतीजी इसका कुछ हिसाब न था। लम्बे-चौड़े दालानों, बगीचों और बड़े-बड़े कमरोंके बीचमेंसे होकर जब वह गुज़रा, तो सारी विगत स्मृतियाँ लौट-लौटकर उसके मस्तिष्कको छूने लगीं।

फिर चाचीका कक्ष आया, जहाँ एक बड़े पलंगपर राजरानियोंकी तरह इस विस्तीर्ण गृहकी देवी विश्राम कर रही थी। दो दासियाँ पैर दबाने में लगी थीं और दो पंखा झल रही थीं। दो-तीन कुलवधुएँ कुछ सीना-पिरोना लिये बैठी थीं। सेवकने द्वारपर रुककर सूचना दी: "सहायक

सेनापति दुर्लभरामके सुपुत्र छतरसिंह पधारे हैं। अनुमति हो, तो भीतर ले आऊँ।"

कुछ देर उत्तरकी प्रतीक्षा करनेके बाद भीतरसे किसी नारी-कण्ठने कहा, "अनुमति है। नहीं भी होगी, तो क्या ये लौटकर थोड़े ही जायेंगे?"

सेवकने मुस्कराकर मार्ग छोड़ दिया और छतरसिंह कक्षके भीतर चला गया। पलंगपर पड़ी स्त्रीने तनिक उठकर कहा, "आओ बेटा! इतने दिनों बाद आये हो और ऐसे आ गये, जैसे अचानक वर्षा आ जाती है। बैठो।"

बैठते-बैठते छतरसिंहने प्रणाम किया और जुड़े हुए हाथोंके बीचसे उसने कक्षके भीतर एक विहङ्गम दृष्टि डाली। कुलवधुएँ मीना-पिरोना अपनी आँखोंके और निकट ले आई थीं। दासियाँ अपने कामोंमें और भी अधिक तीव्रताके साथ प्रवृत्त हो गई थीं। केवल एक लड़की एक खुली हुई खिड़कीमें ज्यों-की-त्यों बैठी थी। खिड़कीके एक पल्लेसे पीठ टिकाकर उसने दूसरे पल्लेसे पैरोंके पंजे टिका रखे थे और उसके मुड़े घुटनोंपर एक किताब खुली हुई थी। प्रणामके जुड़े हुए हाथ नीचे गिराकर छतरसिंह कुछ अधिक देर उसकी ओर देखनेका लोभ-संवरण नहीं कर सका।

चाचीने कहा, "इस नटखटको क्या देखता है, बेटा! यह तो पुरुष होती और इसे कोई बड़ा-सा ओहदा नवाब साहबके यहाँ मिल जाता, तो ठीक था। जानते हो क्या-क्या करती रहती है! अब फिरंगियोंकी भाषा सीखनेकी धुन सवार हुई है!"

लड़कीने अपनी लम्बी लम्बी पलकें ऊपर उठाईं और तमककर बोली, "टिड्डी दलकी तरह ये फिरंगी जो हमारी खेतियोंपर मँडरा रहे हैं, माँ जी, सो खेती चाटनेकी कैसी-कैसी तरकीबें इनकी भाषामें लिखी हैं यह सब ए बी सी डी पढ़कर ही तो पता लगेगा न। सुना है इंगलिस्तान

में उनके खेतोंमें अनाज नहीं पैदा होता है, इसलिए दूसरोंकी रोटी छीननेको सात समुन्दर पार करके ये लोग हिन्दुस्तानमें आये हैं...'

"लो, और सुनो!" चाचीने कहा, "यह सब इसने सुना है! मैं कहती हूँ यह सब इसने इन निगोड़ी किताबोंमें पढ़ा है। थोड़े दिन और पढ़ेगी, तो इसके लिए यहाँ घरके भीतर एक कचहरी खोलनी पड़ेगी, और, बेटा, इन न्यायाधीश्वरीके सम्मुख अपराधियोंको पकड़-पकड़कर तुम लाया करोगे।'

छत्तरसिंह मुसकरा उठा। वह बोला, "सबसे पहला अपराधी तो मैं ही हूँ, चाची जी।"

तब उन कुलवधुओंमेंसे एकने कहा, "तुम कैसे अपराधी हो, लाला?"

अब छत्तरसिंहके मुँहसे झोंकमें निकले शब्दोंका गूढ़ अर्थ लगाकर सभी हल्की-हल्की मुसकराहटके साथ उसकी ओर देखने लगे, तो वह लज्जित होते हुए बोला, "सिराजुद्दौलाकी दरबारी प्रतियोगितामें मैं एक अपराध आज कर आया हूँ।"

इस बातपर लड़की झटसे बोल उठी, "मुझे मालूम है, माँ जी, नबाब हजूरके दरबारमें इन्होंने एक मक्खी मार दी थी।"

इसपर जो कहकहा उस स्थानपर उपस्थित नारी-समाजमें लगा, तो युवकको मुँह छिपानेके लिए जगह नहीं मिली। उसने झेंपकर कहा, "माँ जी, युग बदल गया है। कागजपर अक्षरोंके कीड़े-मकोड़े मारने वालोंके सामने सचमुचकी मक्खियाँ मारने वालोंकी पूछ कहाँ।"

इसपर फिर एक सुसभ्य ठहाका लगा और खिड़कीपर बैठी लड़कीने झल्लाकर किताब बन्द कर दी। फिर उसने कहा, "हूँ! ये ही सचमुचकी मक्खियाँ मार-मारकर तो यहाँ रामराज्य स्थापित होगा!"

युवक चौंक पड़ा। "यह रामराज्यकी बात यहाँ तक कैसे आई?"

पलंग पर पड़ी चाचीने कहा, "इसपर आश्चर्य न करो, बेटा। जगत्-



[illegible] की [illegible] की भी शान [illegible] अन्तर [illegible] कि [illegible] घरकी शरम हो रहती है, बाहर नहीं जा पाती ।"

"बात भी तो झूठी नहीं है," एक कुलवधूने कहा ।

कौन बोला यह देखनेके लिए युवकने गरदन फेरी, किन्तु कुछ मालूम न हो सका । उसने कहा, "माँ जी, अब म्लेच्छोंका राज्य असहनीय हो उठा है । सरकारी नौकरियोंमें, वाणिज्य-व्यापारमें, जीवनके हर क्षेत्रमें इन-जैसा पक्षपाती देखनेको नहीं मिला । हम भारतवर्षमें इतने हिन्दू हैं, क्या प्रयत्न करनेपर हम यहाँ रामराज्य स्थापित नहीं कर सकते ?"

शायद माँ जी कुछ कहतीं, लेकिन उनकी सुपुत्री उनसे बहुत अधिक सुन्दर थी । फिर गियोंकी माया पढ़-पढ़कर उसने शायद सबसे पहला गुण यही सीखा था । वह तुरंत बोल उठी, "नहीं ।"

इसपर उस बड़े कक्षमें उपस्थित प्रत्येक मानव-प्राणीकी दृष्टि उस छोकरीपर पड़ गई । सबकी आँखोंमें आश्चर्य था । उसकी माँने कहा, "यह क्या तेरी कोई नई वाचालता है, री ?"

"नहीं, माँ जी" लड़कीने कहा । "सम्राट् अशोक और विक्रमादित्य का युग ही जब हम निकटसे वापस नहीं ला सकते, तो दूरगामी रामका युग ही कैसे वापस आ सकता है ? संघर्षसे बचकर निकल जानेकी चाहमें हम अतीतको वापस लाना चाहते हैं, लेकिन यह भूल जाते हैं कि संघर्ष तो अतीतमें भी था । लङ्काका महायुद्ध, कौरव-पाण्डवोंका महानाश, कलिङ्गकी महाहिंसा और सिकन्दर, महमूदके सर्वनाशी आक्रमणोंको जिसे लाना हो, तो पुराना युग वापस लाओ । राईमें सरसों मिलाकर मेल निकल जानेके बाद दोनोंको अलग करना आता हो, तो निश्चय ही भारतवर्ष से मुसलमान निकल जायेंगे । फिर प्रत्येक असम्भव बात संभव हो जायगी और आश्चर्य नहीं कि रामराज्य भी वापस आ जाय ! पर, माँ जी, कहीं ऐसा न हो कि इन दोनों तत्वोंको अलग-अलग करनेके चक्करमें कोई तीसरा बीचमें आकर सारा तेल ही बिखरा दे ।"

विद्यालय-जैसा वातावरण वहाँ क्षणभरमें छा गया। सबको लगा मानो कोई बड़ा पण्डित कक्षामें उपस्थित विद्यार्थियोंको इतिहासका पाठ पढ़ा रहा हो। पलंग पर अधलेटी नारीने एक लंबी साँस खींचकर लड़की को सम्बोधन करते हुए कहा, "छोकरी, कलसे यह पोथी-पुस्तक उठाकर रख दे, नहीं तो जगत्सेठसे कहकर मैं तुझे इस अन्तःपुरसे निकाल बाहर करूँगी। तेरे सामने सबको ऐसा लगता है, जैसे दुधमुँही बच्चियाँ हों..."

उसी समय बाहरसे पदचाप सुनाई दिये और सेवक-सी आवाज़ सुनाई दी: "जगत्सेठ भैया छतरसिंहको बुला रहे हैं।"

छतरसिंह तुरन्त उठ खड़ा हुआ। उसने श्रद्धासे चाचीके पैर छुए और फिर दर्शन करनेकी कामना प्रकट करते हुए एक छिपी हुई नजर उस ओर डाली, जहाँ फिर पोथी खुल चुकी थी। क्षणभरको होंठोंकी झीनी-झीनी मुसकराहट लिये हुई पुस्तकवाली दृष्टि उठी और अदृश्य रूपसे होंठोंके हास्यका विस्तार करके फिर जहाँकी-तहाँ लग गई।

युवक छतरसिंह अनमना मन लिये हुए वहाँसे वापस लौट चला। वह बहुत कुछ सोच चुका था, बहुत कुछ सोच रहा था और बहुत कुछ सोचनेको उसके पास शेष था। बस, उस समय उसके मनकी स्थिति लगभग यही थी।

बड़े कक्षमें बहुतेरी मसनदोंकी खाली पंक्तियोंके पार उसी कोने वाली मसनदपर जगत्सेठ उठँगकर लेटे हुए थे। छतरसिंह कमरेमें आ भी गया और जाकर उनके सामने बैठ भी गया। फिर भी उनकी बन्द आँखें नहीं खुलीं। युवक प्रतीक्षा करने लगा। कुछ देरमें आँखें बन्द रखे-रखे ही जगत्सेठने कहा:

"बेटा, ऐसा प्रतीत होता है, जैसे मुझे भविष्य-दर्शन हो रहा हो; मेरे सम्मुख भविष्यका चित्र इस तरह खिंच रहा है, जैसे मैं अपनी सूरत दर्पणमें देखता हूँ।"

"कैसा चित्र है, चाचाजी?" युवक छतरसिंहने पूछा।

जगत्सेठका [illegible] ही [illegible] वह [illegible] मुझे लगता है कि जिस अन्तःपुरमें तुम अब होकर आये हो, उसपर असंख्य सैनिकोंका आक्रमण हो रहा है।"

"ऐं!" कुलरसिंह आश्चर्यके उद्रेकमें चमककर बोला। "यह आप क्या सोच रहे हैं!"

"मैं नहीं सोच रहा हूँ," जगत्सेठने कहा, "मुझे भविष्य-दर्शन हो रहा है। मुझे लगता है कि असंख्य सैनिक, शायद नवाब सिराजके सैनिक मेरे मानसम्मानको मिट्टीमें मिलानेके लिए मेरे अन्तःपुरमें घुसे जा रहे हैं। रक्षाका प्रबन्ध भी कम नहीं है। शायद मुख्य प्रवेशद्वारपर एक सजीला, लड़ाका सेनापति मेरी रक्षा करनेके लिए दोनों हाथोंमें तलवार लिये खड़ा है। जबतक वह वहाँ खड़ा है, तबतक इसमें आगेका चित्र मेरे सामने स्पष्ट नहीं होता...न जाने क्यों? जानते हो वह सेनापति कौन है?"

"कौन है?" जैसे प्रतिध्वनिमें किसीने पूछा हो।

"तुम!" जगत्सेठने मानो बेचैनीसे सिर हिलाते हुए कहा, "तुम्हें इस रक्षास्थानसे मुक्त करके मैं आगेके चित्रकी यथार्थ कल्पना नहीं कर पाता।"

"लेकिन क्यों, चाचा जी?" युवकने घबराकर पूछा। "आप ऐसा निरर्थक स्वप्न क्यों देख रहे हैं?"

"स्वप्न नहीं," जगत्सेठने कहा। "यथार्थकी कल्पना है। पहले भी लोगोंको इस तरहका भविष्य-दर्शन करते सुना है। हो सकता है इसका कारण मेरी समझमें आ गया हो।"

"अब आपकी बात समझमें आ रही है, चाचाजी," युवकने कहा, "कोई-न-कोई कारण होना ही चाहिए। मुझे बताइये वह क्या है?"

जगत्सेठकी आँखें खुल गईं। उनमें किसी उत्तेजनाके कारण लाली छा गई मालूम पड़ती थी। तकियेपर रखे उनके हाथकी उँगलियाँ अकड़कर

रूपसे ताकयेपर ९ का चिह्न बनाया और फिर उसके ऊपर वह उँगली घूम-घूमकर छः बिन्दियाँ बना गई। उन्होंने किंचित् मुसकराकर युवककी ओर देखा, फिर तुरन्त ही गम्भीर होकर बोले, "मैं बङ्ग-भूमिपर फिरसे रामराज्य की स्थापनाका निश्चय कर चुका हूँ। मेरा सारा धन इस काममें होम हो जाये, तो भी मैं अपना पग पीछे नहीं हटाऊँगा। हिन्दू प्रजाका कल्याण अब इसीमें है कि समस्त भारतवर्षमें रामराज्यकी पुनःस्थापना हो। नहीं तो जीना व्यर्थ है और इस जीवनको धिक्कार है।"

"लेकिन यह सब होगा कैसे?" युवकके मुखपर अब चिन्ताके चिह्न स्पष्ट रूपसे परिलक्षित होने लगे।

"कैसे होगा?" जगत्सेठने गरदन नीचे कर ली। "जिस विश्वासघात, क्रूरता, दमन और युद्धसे कलियुगने सतयुगपर विजय पाई है, उन्हीं मार्गोंमें होकर गुज़रना होगा। राजनीतिके बन्धन राजनीतिसे कटेंगे। शत्रुकी नीतिसे ही शत्रुपर विजय प्राप्त की जायेगी। बेटा, अपना मन टटोलकर बताओ तो सही उसमें कितना दम है?"

युवक सब कुछ सुनकर सन्न रह गया। रामराज्यकी कल्पना उसके मस्तिष्कमें भी मौजूद थी, लेकिन यह योजना इतनी जल्दी बन जायेगी, इसका विचार तक उसे नहीं था। किन्तु जिस वीरताने इब्नमोहम्मदको भरे दरबार हराया था, वह आड़े वक्तमें सिर उठाकर सामने खड़ी हो गई। उसने उत्साहसे कहा, "मर मिटनेकी साध पूरी हो जायेगी, तो बादमें मनके टटोलने वालोंकी भी कमी नहीं रहेगी, चाचाजी।"

"तब रास्ता साफ है," जगत्सेठने कहा। "व्यापारका लोभी फिरंगी अपना जन-बल और धन-बल हमें देनेको तैयार है। तुम्हारे ऊपर तीन काम हैं: अपने पिता दुर्लभरामको तैयार करना, उनके द्वारा प्रधान सेनापति मीर जाफ़रको बंगालकी गद्दीका लोभ दिलाकर फोड़ लेना, और सबके बाद इस अन्तःपुरके मुख्य द्वारकी दलबल सहित रखवाली करना।

तीनों काम कठिन हैं, ऊपरसे देखनेपर असम्भव हैं, किन्तु करने योग्य हैं। रामराज्य लानेके लिए यह सब आवश्यक है।"

युवकको ऐसा प्रतीत हुआ, जैसे पास ही से कोई गहरी साँस खींच रहा हो। किन्तु इधर-उधर नज़रें पसारकर देखनेपर कुछ नहीं दिखाई दिया। फिर उसने उस कमरेकी दीवारोंपर एक नजर डाली। उसके मस्तिष्कपर कुछ शब्द उभर आये। 'इन दीवारोंके कान हैं!'

वह आगेकी ओर झुक गया। जगत्सेठके कानोंमें उसने कहा, "चाचाजी, चिन्ता न कीजिये। तीनों काम होंगे। उसके बाद क्या होगा यह आप सोच लें, कहीं ऐसा न हो..."

जगत्सेठ मुसकराये। "घबराओ मत। घबरानेसे आगे बढ़नेमें रुकावट आती है। हमारी योजना पक्की है। फिरंगीको व्यापारकी सुविधाएँ चाहिए। हिन्दुओंका राज्य स्थापित होनेपर उन्हें व्यापारकी सुविधाएँ मिलेंगी, किन्तु वैसी ही सुविधाएँ और सबको भी मिलेंगी और हमारे देशका व्यापार नहीं कटेगा। मीरजाफरको राजगद्दी मिलेगी, लेकिन राजकोषके रूपमें उसके पाये नहीं होंगे। फिरंगीसे हमें नकद बीस लाख रुपया मिलेगा...बीस लाख और मेरा समस्त धन मिलाकर यहाँ हिन्दुओंकी एक ऐसी अखण्ड प्रभुता स्थापित हो जायेगी, कि मराठोंको हमारे साथ मिलना पड़ेगा। इसके बाद, बेटा, मैं चाहता हूँ कि तुम्हारे प्रयत्नोंका जो ऋण मुझपर चढ़ जायेगा और पहलेसे ही कन्याका जो ऋण मेरी छातीपर रखा है उन दोनोंसे मैं एक साथ ही मुक्त हो जाऊँगा।"

इतने सारे चित्रोंने मिलकर, जिसमें विकृत और उज्ज्वल सभी प्रकारके चित्र थे, युवककी कल्पनापर एक ऐसा विशाल चित्रागार उपस्थित कर दिया, जिससे मुक्त होना शायद किसी भी युवकके लिए सम्भव न होता। उसने जगत्सेठके चरणोंमें सिर झुकाया।

दुर्लभराम पहले तो बेटेकी बात सुनकर तड़का-भड़का, लेकिन राम-राज्यका सुनहरा स्वप्न उसके भीतर भी हिलोरें ले रहा था। ऊपरसे

कमन पुत्रकी तत्परता और हठ उसे विचलित करने लगे आखिरकार उसने अपनी स्वीकृति दे दी।

मीरजाफर इस प्रस्तावको सुनकर हो हो करके हँसा। खुदा जब देता है छप्पर फाडकर देता है। कितने दिनोंसे बंगालकी गद्दी उसके हृदयके भीतर बैठी हुई थी! आज अवसर मिला, तो उसे छोड़ना नितान्त मूर्खता लगी। वह विश्वासघातपर उतारू हो गया।

फिरङ्गी कमेटीके अध्यक्ष क्लाइव और सेनापति वाट्सने अपने हस्ताक्षरासे सन्धिपत्र तैयार किये और सिराजुद्दौलाके अन्तिम संस्कारपर सबके हिस्सोंकी मोहर लग गई। सन् १८५७ ई० के भारतीय स्वतन्त्रता संग्रामसे ठीक सौ साल पहले प्लासीके मैदानमें बंगालके नवाब सिराजुद्दौलाके भाग्यका फैसला हो गया। ऐन समयपर पैंतालीस हज़ार सेना अपने साथ लेकर प्रधान सेनापति मीरजाफ़र फिरंगियोंकी तरफ़ चला गया। इसके बाद मुर्शिदाबादकी सड़कोंपर फिरंगियोंके बूट भारत माँकी छातीको रौंदते हुए चलने लगे। शेष घटना इसके बाद की है।

जगतसेठ अमीचन्दकी कोठीके बाहर लगभग पाँच सौ सैनिकोंके साथ युवक छतरसिंहका पहरा था। उसकी आँखोंके सामने-सामने बंगालकी राजधानीका सुहाग लुट चुका था। कलकत्तामें भी फिरंगियोंने कम उत्पात नहीं मचाया था। और अब गोरी फौजके सैनिक संगीन चढ़ाये दलबन्द पागल कुत्तोंकी तरह घूम रहे थे।

जगत्सेठको उसका हिस्सा देनेके लिए क्लाइव और स्क्राफ्टन साहब दलबल सहित उनकी कोठीपर पधारे। वही युवक, जो जगत्सेठके अन्तःपुरकी रक्षा करनेके लिए सन्नद्ध हुआ था, चुपचाप सहस्रोंकी संख्यामें फिरंगी बूटोंको कोठीके भीतर जाते देखता रहा। वे तो रक्षक थे, उनसे सुरक्षा कैसी!

वही बड़ा कक्ष था। वे ही मनसदें थीं, वे ही दीवारें थीं। क्लाइवके ठीक सामने जगत्सेठ उसी मुद्रासे दुशाला ओढ़े बैठे थे। उनके मुखपर

प्रसन्नताकी तरंगें मनमें उमंगके साथ नाच रही थीं। अब रामराज्य आ गया है!

क्लाइवने मुसकराकर सन्धिपत्र पढ़ा। इसमें तीन लाख रुपयेकी कोई चर्चा नहीं थी, हिन्दुओंके रामराज्यकी स्थापनाकी कोई बात नहीं थी। मीरजाफरको बंगालका नवाब बनाकर फिरंगियोंमें क्या-क्या बँट रहेगा इसका कोई हवाला नहीं था।

जगत्सेठ काँपते हुए उठ खड़े हुए। "यह क्या है! यह वह सन्धि-पत्र नहीं है, जो मुझे दिखाया गया था। वह लाल कागजपर था।"

"और यह सफ़ेद काग़ज़पर है, यही कहना चाहते हैं न?" क्लाइवने कहा। "लेकिन, सेठ साहब, लाल रंग अशान्ति और युद्धका रंग होता है और सफेद रंग शान्ति और सन्धिका रंग होता है। हम-जैसे शान्तिके रक्षक अपने साथ लाल रंग लिये कैसे घूम सकते हैं? स्क्राफटन साहब, शायद सेठ साहबको कुछ भ्रम हो गया है। सच्ची बात बता दो ना!"

स्क्राफ़टन साहबने खँखारकर गला साफ किया। "जगत्सेठ, लाल रंग वाला सन्धिपत्र जाली था और सफ़ेद रंग वाला असली है। बस, इतना-सा फरक है। खेद है कि आपके नाम इनमें एक कौड़ी तक नहीं है।"

जगत्सेठके पैर लड़खड़ा गये। वह धड़ामसे जमीनपर गिर पड़े। फिरंगी सरदार कुछ क्षणों तक हक्के-बक्के खड़े देखते रहे। फिर उन्होंने कमरेमें चारों ओर मूल्यवान वस्तुओंपर निगाह जमाई और साथ ही एक बड़े जोरकी दिल दहला देने वाली चीख किसी ओरसे आकर कमरेमें उपस्थित सभी लोगोंके दिलोंको कम्पायमान कर गई। फिर जैसे सचेत होकर क्लाइवने चिल्लाते हुए अपने सैनिकोंसे कहा: "लूट लो!"

और सबसे बड़ी लूटका माल तो अन्तःपुरोंमें होता है...

ड्योढ़ पर छत्रसिंह मूँछोंपर ताव देता हुआ कोठीकी रक्षा कर रहा था। चीखकी आवाज उसके कानों तक पहुँची और वह हक्का-बक्का-सा

खड़ा देखता रहा। किन्तु शीघ्र ही उसे चेतना आई और वह अपने सैनिकोंके एक दलके साथ भीतरकी ओर भागा।

फिरंगी सैनिकोंसे मुठभेड़ हुई और उसके साथी पीछे छूटते चले गये। वह दोनों हाथोंसे तलवार घुमाता हुआ सीधा अन्तःपुरमें पहुँच गया। लेकिन वहाँ एक और ही दृश्य उसकी दृष्टिकी प्रतीक्षा कर रहा था।

जगत्सेठके अन्तःपुरकी समस्त कुलवधुओंके शरीर भूलुंठित पड़े थे। किसीका सिर ही धड़से अलग था, तो किसीकी छातीमें कटार घुसी हुई अपना दस्ता ऊपर उठाये हँस रही थी। फिरंगियोंके हाथ सबकुछ लगा था, किन्तु भारतीय ललनाओंका सतीत्व उनकी पहुँचके परे था।

युवकके नेत्र फट गये। उसने पागलोंकी भाँति चारों ओर देखा। फिर उसके पैर चाचीके उसी कक्षकी ओर बढ़े, जहाँ वह पहले एक बार आया था और फिर कई बार आ चुका था।

कक्ष खाली था। केवल उसी खुली खिड़कीपर, एक पल्लेसे पीठ टिकाकर दूसरे पल्लेसे पैरोंके पंजे टिकाये, घुटनोंपर असहायकी भाँति हाथ रखे एक लड़की बैठी थी। यह लड़की खूब जानी-पहचानी थी। उसने उसके पास पहुँचकर उसका हाथ पकड़कर हिलाया, किन्तु वह निर्जीव स्तम्भ-सा लटक गया। उसके उन्नत वक्षःस्थलपर भी कटारका एक दस्ता हँस रहा था। उसके होंठ फड़फड़ाये, युवकने अपने कान पास ले जाकर सुना :

"अब रामराज्य आ गया है!" और लड़कीका सिर लटक गया।

उसी समय पीछेसे एक धाँयकी आवाज़ हुई और युवक तड़पकर लड़कीकी गोदीमें लुढ़क गया।

जगत्सेठके भविष्य-दर्शनमें थोड़ी-सी भूल रह गई थी।



• हरमका कैदी

बेरहमीसे अपने भाईको कत्ल करके सत्ता हासिल करनेकी जो मिसाल औरङ्गजेबने क़ायम की उसके बेटे-पोतोंने उसपर पूरा-पूरा अमल किया। उसके छोटे बेटे मुहम्मद मुअज्जमने अपने बड़े भाई मुहम्मद आजमशाहकी कब्र अपने हाथोंसे बनाई और उसपर अपना तख्त बिछाया। वही बादमें शाहआलमके नामसे प्रसिद्ध हुआ। अपने जीवन-कालमें ही अपने चार बेटोंमें वही लक्षण प्रकट होते देखकर छः वर्ष हुकूमत करनेके बाद वह भारी असन्तोष और चिन्तामें मरा। उसके सबसे बड़े बेटे मौजुद्दीनने किस प्रकार धोखाधड़ी और ऐयारीसे अपने तीन भाइयों—मुहम्मद आजम, रफीउल-क़ादिर और ख़ुजिस्ता अख्तरका नामनिशान, दुनियासे मिटाकर तख्त हासिल किया यह एक लम्बी और शर्मनाक कहानी है उसने अपनेको जहाँदारशाहके नामसे विख्यात किया!

इतना सब करके जहाँदारशाहने अनुभव किया कि उसे और तो सब कुछ मिल गया है, लेकिन निरन्तर उपेक्षा करके वह अपने अन्तःकरणसे हाथ धो बैठा है। क्रूर रक्तपात और घृणित परिश्रमसे हाथ आये हुए वैभव-का बेतहाशा उपभोग करनेके लिए वह सिरसे पाँवतक विलासितामें डूब गया। उसके पास गमको ग़लत करनेके लिए यही एकमात्र तरीक़ा रह गया था। इस विलासितामें केन्द्रमूर्ति विगत शाहआलमके दरबारकी एक खूबसूरत गायिका और नर्तकी लालकुँवर थी।

लालकुँवर असाधारण सौन्दर्यकी स्वामिनी थी। बचपनसे समय उसकी जवानकी मिठास लक्ष्य करनेकी वस्तु थी। कलाकी निरन्तर सेवासे शाह-आलमके दरबारमें उसने ऊँचा पद प्राप्त किया था। किन्तु वैभवके शिखर-पर पहुँचकर कलाकारने अनुभव किया कि शाह जहाँदारके पास उसकी

कलाकी अपेक्षा उसके शरीरका ही मूल्य अधिक है। वह उसके ठुमकोंपर जान जानेकी दुहाई देता है, उसके मीठे बोलोंको आँखें मीचकर सुनते ही रहनेकी कामना प्रकट करता है, तो उसके शरीरको भूखे भेड़ियेकी तरह घूरता भी है। इस भावनाका अनुभव करके नर्तकीका मन घुटने लगता। लगता कि दिल्लीका शाहीमहल एक कैदखाना है, जहाँ रोज़-रोज़ उसकी कलाके मरघटपर फातिहा पढ़ा जाता है। शाह उसके नृत्य और गीतोंकी तारीफ़ करता-करता उसके अङ्ग-विन्यासमें उलझ जाता है। वह उसके शरीरके उतार-चढ़ावपर प्रशंसाओंके पुल बाँधता है। उसके प्रेम-निवेदनमें प्रेमीकी व्याकुलता नहीं है, शक्तिका मद है।

एक दिन इसी प्रकार जब शाह शराबकी अधिक मात्रा पी लेनेसे नशेमें बकता-झकता बेहोश हो गया, तो लालकुँवर तनकी थकान मिटानेके लिए बाहर बारहदरीमें निकल आई। अटारीसे नीचेकी छोटी-सी बग़ीचीमें चाँदनी छिटकी हुई थी और बेलेकी मधुर महक ऊपर उठी आ रही थी। लालकुँवर थकानके मारे निढाल हो रही थी। उसने एक बार ऊपर आकाशकी ओर दृष्टि उठाई। सोचा—काश कि उसमें इस बन्धनसे मुक्त होकर इस नीले-नीले आकाशमें स्वच्छन्द वायुमण्डलमें उड़नेकी ताक़त आ जाती। तब वह भी पंख फैलाकर उड़नेवाले पक्षीकी तरह दुनियासे अलग रहकर उसपर छाई रहती।

उसे थकानसे चूर देखकर बारहदरीमें खड़ी एक सोती-जागती लौंडी गुलाबपाश उठाकर उसपर सुगन्ध छिड़कनेके लिए आगे बढ़ी, लेकिन उसने उसे इशारेसे रोक दिया। फिर धीरे-धीरे वह चोड़ी सीढ़ियोंसे नीचे बग़ीचीमें उतर गयी।

बग़ीचीके एक अँधेरे कोनेमें उसके आकस्मिक स्वागतके लिए एक व्यक्ति पहलेसे ही उपस्थित था। वह इतिहासप्रसिद्ध बादशाहोंको बनाने और बिगाड़नेवाले दो सैयद भाइयोंमेंसे एक था जिनके नाम हसनअली-खाँ और अब्दुल्लाखाँ उस समय शैतानकी तरह मशहूर थे। अँधेरेमें

सैयदकी दाढ़ीकी छाया हरी घासकी चाँदनीपर पड़ी देखकर लालकुँवर भयसे लगभग चिल्ला उठी।

हसन अलीने उसका मुँह दबोचकर चीखकी आवाज़को निकलनेसे रोका। "क्या करती है? एक हफ्तेसे तेरी एक निगाह इधरसे फेरनेके लिए मैं एक टाँगसे रातभर यहाँ खड़ा रहता हूँ और तू अब कुत्तोंकी मौत मरवाना चाहती है?"

हसनअलीके रोबदार चेहरेको पहचानकर लालकुँवरको सान्त्वना मिली, और फिर उसके मुँहपर थकानके कारण उसके वितृष्णाके भाव उभर आये। लापरवाहीसे उसने कहा,—"इस दुनियामें बड़े-बड़े आशिक हैं, सिरके बल आने वाले, एक टाँगसे खड़े रहनेवाले और सिरपर पाँव रखकर भाग जाने वाले! आपने कुछ अजीब नहीं किया, सैयद साहब!"

"क्या बकती है?" सैयदने कानपर हाथ रखकर तोबा करते हुए कहा। "तूने भी क्या उस नानुगढ़ शाह जैसा समझ लिया है, जो यह भी नहीं जानता कि राम क्या होता है, लेकिन उसे हमेशा ग़लत करनेकी फ़िकरमें रहता है! मैं सैयद हूँ और दुनियाको गुनाहोंसे पाक रखना ही मेरा पहला फ़र्ज़ है। तुझ जैसी गुनहगार चीज़से इश्क करना मेरा काम नहीं है।"

बहुत अधिक थक जानेके कारण लालकुँवर सैयदके सामने ही चाँदनी पर बैठ गयी। "आज तक कोई इस गुनहगार दुनियाको गुनाहोंसे पाक नहीं कर सका है, सैयद साहब! आप चाहें तो खुद अपनेको पाक कर सकते हैं।"

"जबानदराज लड़की, मैं तुझे मिल्लतका हुक्म देने आया हूँ, तुझसे बहस करके अपना क़ीमती वक्त बरबाद करने नहीं आया। तुझे शाहने मुँह चढ़ा रखा है इसलिए तेरी ज़बान बड़े-छोटेका लिहाज नहीं करती। मैं एक राज़की बात तुझसे कहना चाहता हूँ। क्या तू पाकपरवरदिगारको

हाजिरनाजिर जानकर क़सम खायगी कि इस राज़की बातको कभी ताज़ुबर भी नहीं लायेगी !"

लालकुँवर उठ बैठी। उसने खड़े हुए सैयदको बैठे-बैठे ही शोख़ीसे आदाब बजा लाकर कहा, "कनीज इतनी भारी इज़्ज़त बख़्शी जानेके लिए शुक्रिया अदा करती है। लेकिन लोग कहते हैं कि क़सम खाने वाले झूठे होते हैं। अगर कोई राज़की बात है तो इस नाचीज़को उससे अनजान ही रखे जानेकी रहमत फरमाई जाये। शायद कनीज उस राज़दारीको न निभा सके।"

"नहीं।" सैयद चिन्तामग्न हो गया। तुझसे कहे बिना काम नहीं चलेगा। साथ ही अगर तू इस राज़के कामको अमलमें न ला सकी, तो तुझे फौरनसे पेश्तर इस दुनियासे उठा दिया जायेगा।"

"यह तो जनाबकी किसी क़दर ज़्यादती है, बुज़ुर्गवार। जिस गुनाहमें कनीज फँसना नहीं चाहती उसमें उसे घसीटना बेजा है। इससे अच्छी तो इश्ककी बातें ही होती हैं, जिन्हें सुनकर दो घड़ी खुशीका आलम तो रहता है।" लालकुँवरने शैतानीसे सैयदकी तरफ देखा।

सैयदने कानोंपर हाथ रखकर एक बार फिर तोबा की। "लेकिन तेरे बिना कोई यह काम कर नहीं सकेगा। इस कामकी पाकीज़गीसे जो सवाब होगा उससे तू आगे तरक्की करेगी, अगर उज्र करेगी तो दोज़खकी आगमें जलेगी।"

"कनीजके लिए तो यही दोज़ख है, सैयद साहब।" लालकुँवरने इत्मीनानका प्रदर्शन करते हुए कहा।

बार-बार इस तरह झुठला दिये जानेसे सैयदकी भौंहें तन गयीं। उसने धीमी किन्तु रोबदार आवाज़में गम्भीरताके साथ कहा,—"लड़की।"

लालकुँवर सारी शोख़ी भूलकर सहम गयी। उसने झुककर माथेपर हाथ ले जाते हुए कहा, "हुज़ूर!"



"यह उसका हुक्म है, जो कलामे पाकको रोज़-रोज अपनी ज़बानसे अदा करता है। तुझे यह हुक्म मानना ही पड़ेगा।"

"अगर कनीज़को पहले ही यह हुक्म दे दिया जाता तो अब तक वह अमल भी हो चुका होता। उसके लिए जन्नतका लालच और दोज़खका डर दिखानेकी बिलकुल भी जरूरत नहीं थी, हजूर आली।"

"तो सुन," आवाज़को और भी धीमी करके सैयदने अपने अस्तीनमेंसे एक सफेद पुड़िया निकालते हुए कहा—"शाह जहाँदार एक निकम्मी शख्सीयत और शरीयतका मुजरिम है। वह दिन-रात बुरी चीज़को होंठोंसे लगाये पड़ा रहता है, खल्क़े खुदा उसके गुनाहोंसे बेज़ार है। शरीयतके हामी एक जान होकर तुझे यह हुक्म देते हैं कि तू इस कातिल ज़हरके ज़रिये इस गाफिल बादशाहको हमेशाके लिए गफलतकी नींद सुला दे, ताकि वह उस पाकपरवरदिगारके हज़ूरमें जाकर अपने गुनाहोंकी तोबा कर सके।

सैयदकी बात सुनकर लालकुँवर चौंककर दो कदम पीछे हट गयी। "सैयद साहब, यह आप क्या फरमा रहे हैं।"

"अल्लाहके वास्ते जिस कामकी नीयत की जाती है उसपर यक़ीन करना चाहिए। उसके महत्त्वको समझना चाहिए।" बात खुल जानेके बाद सैयदने एक क्षण पैनी निगाहोंसे लालकुँवरकी मुखाकृतिको आशङ्काके भावसे देखा।

"फिर क्या होगा?" लालकुँवरने पूछा।

"इस अत्याचारी और विलासी बादशाहको तख्तसे उतारकर हम दूसरे बादशाहको तख्तपर बिठायेंगे, जो रहमदिल होगा और रियायाका हिमायत करेगा।"

"और अगर उसने भी जनताको इन्साफ न दिया तो?" लालकुँवरने पूछा।

"कोशिश करना इनसानका फर्ज है," सैयदने उत्तर दिया।

नहीं सैयद साहब, कोई बादशाह इन्साफ़ करनेके लिए इन्साफ़ नहीं करता। बादशाह इन्साफ़ करनेके लिए पैदा ही नहीं हुए। बादशाह तो एक व्यापारी है। कोई व्यापारी न्यायकी तराजूमें पासंग रखना ही अधिक लाभकी बात समझता है तो कोई दयानतदारीके बहाने रियायाका पैसा लूटता है। बादशाहोंका अदलाबदलोंसे इस बिगडे हुए ज़मानेकी रंगत कब ठीक हुई है? सैयद साहब, हिम्मत हो तो इस रंगतके खिलाफ़ आवाज उठाइए, सेनाओंके बलपर नहीं, कत्लके बलपर नहीं, उन लोगोंके बलपर जो अपने खूनपसीनेकी कमाई शासन-सत्ताके गलेके नीचे न चाह कर भी उतार देते हैं, और इस तरह उन्हें ताक़त देते हैं कि वे हम जैसी कनीज़ोंको जरखरीद गुलाम बनाकर विलासिताका जीवन व्यतीत करें। पर इसमें हाथका कौशल काम नहीं आयगा, हृदयका साहस और बुद्धिका बल काम आयगा।" लालकुँवरका मुँह चाँदनीकी एक किरण पाकर चमक उठा।

तलवारके योद्धापर इस विनम्र उपदेशका कोई असर नहीं पड़ा। वह उकताकर तीखे स्वरमें बोला, "लड़की, मैं मिल्लते-क़ौमकी तरफ़से तुझे हुक्म देता हूँ कि जो कुछ तुझे कहा गया है उसपर अमल कर।"

लालकुँवर तनकर खड़ी हो गई। "नहीं, नहीं, कनीज इस हुक्मपर अमल करनेसे साफ़ इन्कार करती है।" और उसके खूबसूरत चेहरेपर भयकी घटाएँ घुमड़ आईं।

क्षणमात्रमें सैयदके हाथोंमें एक खमदार चमचमाती हुई कटार दिखाई देने लगी। "याद रख, तू सैयदके सबसे अज़ीज राज़की मालिक है, और सैयद कोई काम अधूरा नहीं छोड़ता, और वह फतेह हासिल करता है क्योंकि वह अपने लिए कोई काम नहीं करता। सैयद सिर्फ़ खुदाकी मरजीका पाबन्द है।"

लालकुँवर कातर होकर बोली, 'हाँ, बुजर्गवार, मार दो इस कनीजको, ताकि वह इस बादशाहतके जलील और चक्करदार गोलदायरेसे जनात पा



सके। लेकिन लालकुँवरके हाथों एक इन्सानका खून नहीं होगा, नहीं होगा। कनीजकी छातीमें वह कटार पेवस्त कर दो क्योंकि यही एक चीज उन घिनौनी चीज़ोंमेंसे रह गई जिन्होंने कनीजकी छातीको छूकर नापाक किया है।" और चाँदनीमें उसके वक्षके उतार-चढ़ावकी गति स्पष्ट रूपसे परिलक्षित होने लगी।

सैयद दो क़दम आगे बढ़ा। "लड़की, अपने अगले-पिछले गुनाहोंको याद कर। खुदाके हुजूरमें उनकी तौबा कर। तेरी रूहको इस फ़ानी जिस्ममें अब बहुत देर रहनेकी इजाजत नहीं दी जा सकती।"

"कनीजने कोई गुनाह नहीं किया है, सैयद साहब," लालकुँवरने कहा। "लोगोंने मेरे बहाने गुनाह किये हैं, और कर रहे हैं। अगर खुदाको उनकी तौबामें यकीन हो सके, तो वे ही अपने गुनाहोंकी तौबा करें। कनीज मरनेके लिए तैयार है। हकीकतमें कनीजको अबसे बहुत पहले मर जाना चाहिए था। लेकिन ताज्जुब है किस तरह इन्सानकी जिन्दगी इतनी बदबू में गुजर जाती है।"

सैयदकी बेधड़क दृष्टि लालकुँवरके चेहरेपर जा टिकी। वहाँ उदासी और उपेक्षाके भावोंने उसके मुखको करुणाजनक बना दिया था। सैयद की विकराल छाया अन्धेरेसे निकलकर दो क़दम आगे बढ़ी। हरी घासपर उसकी परछाईं लम्बाकार होकर फैल गई। लालकुँवर आगे बढ़कर जहाँ-की-तहाँ पत्थरकी मूरतकी तरह खड़ी रहा।

क़त्ल करना सैयदका अभ्यास था। यही उसका पेशा था। औरङ्गजेब के बाद न जाने कितने भाग्यहीन उसकी चमचमाती कटारको चूमकर दम तोड़ चुके थे। किन्तु लालकुँवरकी कमज़ोर, लाचार और शान्त मुद्राके सामने उसकी मजबूत कलाई भी काँप गई और कटारको अछूती रखकर वह बोल उठा, "लालकुँवर!"

लालकुँवरने उसके बोलका उत्तर नहीं दिया। वह बोली, "कनीज अचानक आपको सामने देखकर आदाब बजाना भूल गई थी। अब वह

जाते वक्त ऐसी गुस्ताखी नहीं करेगी सैयद साहब कनीज आदाब अर्ज करती है।" और वह घुटनोंके बल झुक गई।

क़ातिलने आज पहले-पहल कत्ल करते हुए हिचकिचाकर कहा, "न जाने क्यों, तुझे मारनेको जी नहीं चाहता।"

लालकुँवर अब भी आँखें मीचे रही। "नहीं, सैयद साहब, खेल न खेलाइये। आगे बढ़कर अपना काम खतम करिये। अगर कोई दूसरी दुनिया है, तो वह कम-से-कम इस दुनियासे तो खूबसूरत होगी।"

सैयदने कटार म्यानमें रख ली। "नहीं शायद खुदाकी यही मरजी है। वादा कर कि यह राज राज़ ही रहेगा।"

लालकुँवरने आँखें खोल दी। उसने आश्चर्यके साथ सैयदके अन्दर कुछ देरके लिए उभरे हुए इन्सानको देखकर कहा, "सैयद साहब, जब तक राज राज रहेंगे दुनियासे गुनाहोंका जनाजा नहीं उठ सकेगा।"

हताश होकर सैयदने कहा, "जा, मैं तेरी भोली सूरतपर विश्वास करता हूँ। जब तू गुनहगार इन्सान तकको मरने नहीं देती, तो पाक जिस्म तेरे हाथोंसे फना नहीं हो सकेंगे।"

लालकुँवरने उत्तरमें कहा, "काश कि यही विश्वास दुनिया वालोंको हमेशा-हमेशा रहता।" वह फिर आदाबके लिए झुकी। सैयद उसे तसलीम करके पीछेके घने अन्धकारमें लोप हो गया।

लालकुँवर मुड़कर अटारीके जीनेकी तरफ़ बढ़ी। धीमे-धीमे थके हुए पग रखती वह जीनेसे ऊपर चढ़ गई। वहाँ बारहदरीमें लौंडी अपनी नियत जगहपर नहीं थी यह उसने लक्ष्य नहीं किया। वह उसके पीछे-पीछे गुलाबपाश लेकर बगीचेमें गई थी यह भी उसे ध्यान नहीं था। बगीचेमें लालकुँवरके जानेके बाद वह पेड़ोंके झुरमुटसे घबराहटके साथ निकली। एक हाथ अपने धड़कते हुए हृदयपर रखकर वह घबराहटके साथ जीनेकी ओर बढ़ी। जहाँपनाहको इस षड्यन्त्र और उससे लालकुँवरकी अद्भुत पवित्रताका पता देनेसे भारी इनाम मिलने की आशा थी।

अगली सुबह होशमें आते ही शाहके सामने वह वफादार बाँदी पेश हुई और उसने पिछली रातका कुल हाल उसके सामने खोल दिया। लेकिन वक्त हाथसे निकल चुका था। सैयद हसनअली खाँ और सैयद अब्दुल्लाखाँ उसे तख्तसे उतारनेका पक्का इरादा कर चुके थे। इससे पहले कि शाहंशाहके विशेष अङ्गरक्षक उनकी गिरफ्तारीका परवाना लेकर पहुँचे वे दोनों बंगालकी ओर कूच कर चुके थे, जहाँ विगत मुहम्मद आज़मके बेटे और वर्तमान सुलतानके भतीजे फरुखसियरको निमन्त्रण दिया जाना था कि वह जहाँदारशाहको तख्तसे उतारकर स्वयं उसकी रौनक बढ़ाये, दूसरे शब्दोंमें मुगलिया सल्तनतके डगमगाते हुए सिंहासनपर उठे हुए काँटोंपर गिरकर अपनी आँखें फोड़ ले, अपनी जान दे दे, जिनका साक्षी उस समय कोई न था केवल आनेवाला इतिहास था।

जहाँदारशाह अब भी मुगल शाहंशाहियतकी अपार सेनाओंका स्वामी था। सैयद भाइयोंको पकड़ न पानेकी अपनी असफलतापर उसने उपेक्षामें सिर हिलाया और फिर नृत्य और गायनसे अपने हृदयकी धड़कनको दबा देनेके लिए वह लालकुँवरमें उलझ गया। दीवानेखासको रङ्गमञ्चका रूप दिया गया और लालकुँवरको उसपर सुराही और जामके साथ उतार दिया गया।

शाहकी निगाहोंमें लालकुँवर पहले एक परी थी। बीती हुई रातकी घटना सुनकर वह उसके लिए देवी हो गई। साथ-ही-साथ उसने अपनेको भी देवता मान लिया, और देवताओंका काम होता है अपने लिए दूसरे-मोंडेका प्रबन्ध करके कुत्तोंको रोटी देनेका दम्भ करना। शाहकी जान-कारीसे अनजान लालकुँवरने जब रोजकी तरह अपने चेहरेपर बरबस एक मुसकान लाकर नृत्यका एक चक्कर लगाया और सुराही उठाकर शराबका एक जाम उसके सामने पेश किया, तो वह आह्लाद और मस्तीमें झूम उठा। तड़पकर उसने कहा, "आज शाहंशाहे हिन्दकी तबियत है कि

तू उनके हुजूरसे दुनियाकी बेशक़ीमती-से-बेशक़ीमती चीज माँगे और वह तुझे अदा फरमायें।"

लालकुँवरने सहज स्वभावसे हास्यके साथ कहा, "जो कनीज अपने हाथोंसे किसीको ज़हर पिलाती है वह इतनी बड़ी इनायतके काबिल नहीं है।" और उसने मद्यरूपी विषसे भरी सुराहीकी ओर उँगली बढ़ाकर उसे छलका दिया।

लालकुँवरकी इस भोली अदापर हजार जानसे न्यौछावर होते हुए शाहने कहा,—"नहीं, हम उसे कुछ देना चाहते हैं, जिसके हाथोंमें आकर यह जहर भी अमृतका काम करता है। माँग ले, लालकुँवर, अगर तू हमसे हमारी अजीजतरीन चीज भी माँगेगी, तो हम देनेमें उज्र नहीं करेंगे।"

बादशाहकी आँखोंमें दानका वह अपूर्वभाव देखकर लालकुँवरकी आँखोंमें उसकी सबसे अधिक इच्छित वस्तुका रूप घूम गया, किन्तु साथ ही उसकी अलभ्यताका अनुमान करके उसके उन भोले नेत्रोंमें जल छलक आया। सहसा वह शाहके सामने घुटने टेककर गिड़गिड़ा उठी, "शाहशाह आलमकी इस क़दर मेहरबानी देखकर कनीजकी जबान नहीं खुलती। अगर जहाँपनाहका यही रहम व करम है, तो कनीजको उसकी सबसे अजीज़तरीन चीज़ अता फरमाई जाये। उसे उसकी आज़ादी वापस लौटा दी जाये।" एक बार रुककर फिर उसने अपनी प्रार्थना दोहराई। "दीजिये, शाहशाह हिन्द, लौंडीका गला इस घुटने वाले वातावरणकी उँगलियोंसे आज़ाद कर दीजिये।"

जहाँदारशाह चमककर उठ खड़ा हुआ, उसे तत्काल अपनी भूलका अनुभव हुआ। अपने संकल्पके महत्त्वसे अवगत होकर उसने लालकुँवरको घबराहट की ललचाई दृष्टिसे देखा, "हः हः, आजादी भी कोई चीज़ है, जो शाहशाहोंसे माँगी जाती है? तू हमसे हमारे ताजका सबसे बड़ा हीरा माँगती, हम तेरे क़दमोंपर उसे चूमकर रख देते, तू हमारे हरमका सबसे ऊँचा



ओहदा माँगती, हम तुझे अपने सिर आँखोंपर बिठाकर अपनेको खुश-किस्मत समझते। लेकिन तू हमारी आँखोंसे दूर होकर हमारी खुशी हमसे छीन लेना चाहती है। यह कैसे हो सकता है?"

न देने वाले कर्जदारकी आँखोंमें जो चमक होती है वही इस ननर शाहकी आँखोंमें देखकर लालकुँवर दूसरेके सामने अपने मनके अचानक खुल गये भागोंको यत्न करके समेटने लगी। इस दुनियामें न जाने कितने इन्सान बन्धनकी दम घुटनेवाली परिस्थितियों और घृणापूर्ण वातावरणमें पड़कर छटपटाया करते हैं। लालकुँवर स्वतन्त्रताके लिए पिंजरेकी तीलियों पर सिर मारते हुए पंछीकी तरह जहाँदारशाहकी ठोकरोंमें लोट गयी, "जहाँपनाह अगर कनीजको आजादी नहीं दे सकते, तो उसे उसकी मौत ही दे दी जाये।"

"यह तो सबसे बड़ी आजादी है, लालकुँवर," शाहने कुटिलतासे होंठ वक्र करके कहा, "तेरा दिमाग आज अपनी जगहपर नहीं है, मायदौलत तुझे आराम करनेका हुक्म देते हैं।"

शाह चला गया और लालकुँवर जहाँ-की-तहाँ चित्रलिखित-सी बैठी रही। कैसा दर्दनाक है यह बन्धन, जहाँ आराम करनेका भी हुक्म मिलता है।

शामके समय जब फिर शाहजहाँदारको स्वाभाविक वक्त आया और वह दिन भर असाधारण रूपसे हरमसे दूर रहनेसे ऊबता गया, तो फिर लालकुँवरकी हाजिरीका हुक्म दिया गया, कुछ देर बाद लालकुँवर उसके सामने पहुँची, तो वह उसे देखकर ठकसे रह गया।

आज लालकुँवरने जी भरकर शृङ्गार किया था। उसके अङ्गोंसे सुगन्धिका सागर उमड़ा पड़ता था। हीरोंसे उसकी पोशाक झिलमिला रही थी। एक लाल पन्ना उसके माथेपर खूनका रङ्ग बिखेर रहा था। शरीरमें चपलता भरी थी। उसे देखते ही जहाँदारशाह पलकें झपकाना

भूल गया। क्या आज तक जो इस परीने सिंगार किया था वह नहींके बराबर था? वह प्रसन्नतासे चिल्लाया :

"शुक्र है खुदाका, कुँवर, बड़ी जल्दी तुझे अक्ल आई। भला क्या-क्या ख्यालात तुझे आये हम भी तो सुनें?"

लालकुँवर मुसकराई। "कनीजने सोचा कि शाहंशाह तो आखिर शाहंशाह हैं।"

"हाँ।"

"और कनीज कनीज ही है।"

"बहुत खूब।"

"और शाहंशाह सबसे बड़ा है।"

"वाह, वाह!"

"लेकिन शाहंशाहसे भी एक बड़ी चीज़ है।"

"वह क्या?" जहाँदारशाहने खुमारीसे चौंककर पूछा।

"व्यवस्था, जिसे आमलोग चलन कहते हैं। जहाँपनाह! शाहंशाह आज सिर्फ़ इसलिए शाहंशाह हैं कि व्यवस्था उनके पक्षमें है। कनीज सिर्फ़ इसलिए कनीज है कि चलन उसके विपरीत है! शाहंशाह सिर्फ़ इसलिए सबसे बड़ा है कि चलनने उसे सबसे बड़ा मान रखा है।"

"सही है," शाहने किसी क़दर खुश होते हुए कहा।

लेकिन इस चलनमें भी एक खराबी है, जहाँपनाह! आग जिस तरह जितनी बढ़ती है उतने ही अपने शत्रु पैदा कर लेती है। इसी तरह कोई व्यवस्था जितनी फैलती है उतने ही उसके दुश्मन पैदा हो जाते हैं। यही वजह है कि शाहंशाह शाहंशाह नहीं रहते, कनीजें कनीजे नहीं रहतीं, कुछ मर जाती हैं कुछ बदल जाती हैं। ज़माना आगे बढ़ता है यही नियम है और चलन जब तक खत्म नहीं हो जाता तब तक अपने ही तनको नोचता रहता है और..."